सर्वहारा दृष्टिकोण

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर ऑफ इण्डिया (कम्युनिस्ट) का मुखपत्र (पाक्षिक)

वर्ष-27 अंक-18 23 सितम्बर से 7 अक्तूबर, 2012 मुख्य संपादक - कॉमरेड कृष्ण चक्रवर्ती मूल्य : 2 रुपये

डीजल के दामों में बढ़ोतरी व रसोई गैस सिलैण्डरों की राशनिंग का एस.यू.सी.आई(सी) द्वारा देशभर में विरोध

एसयूसीआई(कम्युनिस्ट) के महासचिव कॉमरेड प्रभाष घोष ने 14 सितम्बर को यह बयान जारी किया :

डीजल के दामों में की गई 5 रुपये प्रति लीटर की बेतहाशा बढ़ोतरी व सब्सिडी के गैस सिलैण्डरों की आपूर्ति 6 तक सीमित कर देने के कांग्रेस के नेतृत्व वाली यूपीए सरकार के अन्यायपूर्ण और निर्मम फैसले का हम कड़ा विरोध करते हैं। इससे आवश्यक वस्तुओं की पहले ही आकाशछूती महंगाई और बढ़ेगी, ट्रांसपोर्ट भाड़े और बिजली की दरें रिकार्ड ऊँचाई पर पहुँच जाएंगी जिससे आम आदमी का जीना दूभर हो जाएगा। गौरतलब है कि लोकतंत्र और संसद की सार्वभौमता के बारे में सरकार गला फाड़ कर चिल्लाती है जबकि संसद को दरकिनार करके खुलेआम और जानबूझ कर ऐसे मनहूस कदम उठा कर अपने दावे का मखौल उड़ा रही है। यह एक बार फिर सिद्ध करता है कि तथाकथित सुधारों के नाम पर और 'आर्थिक मजबूरी' के नितांत कपटपूर्ण बहाने की आड़ में इस प्रतिक्रियावादी बुर्जुआ सरकार का मकसद है बड़ी-बड़ी तेल कम्पनियों, कारपोरेट सेक्टर व स्टाक-शेयर मार्केट के सट्टेबाजों को मुनाफे के साथ-साथ बेरोकटोक समृद्धि सुनिश्चित कर देना। इसके लिए अधिकाधिक कंगाल और बदहाल होते जा रहे करोड़ों मेहनतकश लोगों के खून का आखरी कतरा तक निचोड़ा जा रहा है। इस प्रकार पूँजीवाद के घनघोर होते जा रहे संकट का तमाम बोझ पूरी तरह उनके कंधों पर लादा जा रहा है। यह कहने की जरूरत नहीं है कि जीवन की ज्वलन्त समस्याओं पर अति वांछित देशव्यापी संगठित दीर्घस्थाई जोरदार जनवादी जनआन्दोलन के अभाव की वजह से सरकार लोगों को बलि का बकरा बनाने का साहस कर रही है और सीमाहीन आर्थिक बर्बरता सहित एक पर एक दुष्टतापूर्ण कदम उठा कर भी साफ बच निकलती है। जबकि कांग्रेस के अलावा शासक एकाधिकारी पूँजीपतियों की एक और विश्वसनीय पार्टी भाजपा से अपेक्षित है कि वह चुनावी फायदे पर नजर गड़ाए हुए कुछ विरोध करेगी, नकली मार्क्सवादी भी सरकार की इन अनिष्टकर स्कीमों को रोकने के लिए जरूरी जनआन्दोलन गठित करने का कोई गंभीर प्रयास करने की बजाए अपने को मात्र औपचारिक शाब्दिक

(शेष पृष्ठ 2 पर)

दिल्ली में जंतर मंतर पर धरना देते हुए एसयूसीआई (कम्युनिस्ट) के कार्यकर्ता

सरायकेला (झारखण्ड)

गुड़गाँव (हरियाणा)

पटना (बिहार)

बड़ौदा (गुजरात)

श्रमिकों के राष्ट्रीय कन्वेन्शन ने किया दो दिन की हड़ताल का आह्वान

दिल्ली के ताल कटोरा स्टेडियम में आयोजित श्रमिक कन्वेन्शन को सम्बोधित करते हुए कॉमरेड कृष्ण चक्रवर्ती

4 सितम्बर को देश की 11 प्रमुख ट्रेड यूनियनों के तत्वावधान में दिल्ली के ताल कटोरा स्टेडियम में श्रमिकों के राष्ट्रीय कन्वेन्शन का आयोजन किया गया। कन्वेन्शन में पेश किया गया घोषणा पत्र सर्व सम्मति से पारित किया गया। केन्द्रीय ट्रेड यूनियनों द्वारा 2009 से लेकर पिछले तीन सालों से उठाई जा रही माँगों पर व्यापक अभियान छेड़ने का फैसला कन्वेन्शन में लिया गया जिसकी परिणति 20-21 फरवरी, 2013 को

(शेष पृष्ठ 2 पर)

श्रमिकों का राष्ट्रीय कन्वेन्शन

(पृष्ठ 1 का शेष)

दो दिन की अभूतपूर्व हड़ताल में होगी। कन्वेन्शन ने मेहनतकश लोगों से आह्वान किया कि वे इस साल 18-19 दिसम्बर को सत्याग्रह और गिरफ्तारियाँ देने के कार्यक्रम को देशभर में सफल बनाने के लिए पूरी ताकत के साथ आगे आएं। केन्द्रीय ट्रेड यूनियनों की अगुआई में दिल्ली और आसपास के हजारों मजदूर अपनी माँगों के समर्थन में 20 दिसम्बर को संसद मार्च करेंगे। कन्वेन्शन का संदेश देश के कोने-कोने में देने और तमाम तबकों के मजदूरों तक पहुँचाने के लिए सितम्बर, अक्तूबर, नवम्बर में राज्य, जिला और लोकल स्तर की कन्वेन्शनों के साथ ही सभी औद्योगिक सेक्टरों में कन्वेन्शनों का आयोजन किया जाएगा। राष्ट्रीय स्तर पर हासिल की गई मौजूदा एकता को निचले स्तर तक ले जाने पर कन्वेन्शन में मुख्य जोर दिया गया क्योंकि सशक्त संयुक्त आन्दोलन ही सरकार को अपनी मजदूर-विरोधी जनविरोधी नीतियाँ वापस लेने पर मजबूर कर सकता है।

ट्रेड यूनियनों की संयुक्त राष्ट्रीय कन्वेन्शन का संचालन एक अध्यक्षमण्डल ने किया जिसमें अख्तर हुसैन (बीएमएस), अशोक सिंह (इंटक), अमरजीत कौर (एटक), शरद राव (एचएमएस), एके पदमनाभन (सीटू), सत्यवान सिंह (एआईयूटीयूसी), शिवशंकर (टीयूसीसी), अबानी राय (यूटीयूसी), एसपी राय (एआईसीसीटीयू), रतन सभापति (एलपीएफ) और ज्योति मारवा (सेवा) शामिल थे। कन्वेन्शन को बीएमएस से बीएन राय, इंटक से संजीवा रेड्डी, एटक से गुरुदास दासगुप्ता, एचएमएस से एमएस सिद्धू, सीटू से तपन सेन, एआईयूटीयूसी से कृष्ण चक्रवर्ती, टीयूसीसी से एसपी तिवारी, यूटीयूसी से अशोक घोष, एआईसीसीटीयू से सपन मुखर्जी, एलपीएफ से शम्मुघम और सेवा से मोनाली शाह ने सम्बोधित किया।

एआईयूटीयूसी के अखिल भारतीय अध्यक्ष कॉमरेड कृष्ण चक्रवर्ती ने कन्वेन्शन को सम्बोधित करते हुए कहा :

अध्यक्षमण्डल के सदस्य साथियो, केन्द्रीय ट्रेड यूनियनों व फेडरेशनों के नेताओ, कॉमरेडो और दोस्तो,

यह कोई पहली बार नहीं है जो हम इस तरह के कन्वेन्शन में इकटठे हुए हैं। यह कन्वेन्शन पिछले कन्वेन्शनों से एक अलग किस्म का कन्वेन्शन है। यह कन्वेन्शन खासकर पहले वाले आन्दोलनों से ज्यादा बड़े व ज्यादा जोरदार आन्दोलन के लिए है। हमारी मांगों के प्रति सरकार के द्वारा बेहद बेरुखा रवैया अपनाये जाने की वजह से यह कन्वेन्शन बेहद जरूरी हो गया था। हमारी मांगें कितनी जायज हैं यह आप सब को और सरकार को भी बखूबी मालूम है। लेकिन हम पिछले तीन-चार साल से आन्दोलन करते आ रहे हैं फिर भी सरकार हमारी मांगों पर कोई ध्यान नहीं दे रही है। सरकार का यह रवैया क्यों है, यह हमें गहराई से जानना होगा। ये सब समस्याएं हमारे देश के पूंजीवादी शोषण के कारण हैं। ये सब समस्याएं हमारे देश की आजादी की शुरूआत से ही थी लेकिन भूमण्डलीकरण, उदारीकरण और निजीकरण की नीति लागू होने के बाद ये और ज्यादा बढ़ गई हैं औ जीना दूभर कर दिया है, जीवन इतना असहनीय बना दिया है कि 2 लाख से ज्यादा गरीब व मध्यम किसान इस बीच आत्महत्या करने पर मजबूर कर दिये गये हैं। सिर्फ किसान ही नहीं बल्कि बेरोजगार नौजवान भी आत्महत्या कर रहे हैं। लाखों लाख उच्च शिक्षा प्राप्त नौजवानों को नौकरी नहीं मिल रही है। देश की ऐसी दयनीय स्थिति है। ये भूमण्डलीकरण के परिणाम हैं। इस नीति के खिलाफ लड़ाई लड़े बिना कोई भी मांग हासिल नहीं हो सकती। लेकिन ये कठिन संघर्ष है क्योंकि यह सिर्फ कांग्रेस की ही नीति नहीं है। जो भी पार्टी केन्द्र या किसी राज्य में सत्ता में आती है, वह इसी नीति पर चल रही है। असल में यह पूंजीपति वर्ग की नीति है-यह पूंजीवाद को इसकी अन्तिम नियति यानी इसकी मौत से बचाने की नीति है। सरकार इस व्यवस्था की रक्षा कर रही है। यही कारण है कि आन्दोलन बहुत मुश्किल होता जा रहा है। यह सच है कि ये समस्याएं इस पूंजीवादी व्यवस्था को उखाड़ फेंक कर ही अन्तिम रूप से हल हो सकेंगी लेकिन हमारे द्वारा उठाई गई मांगें इस पूंजीवादी व्यवस्था में ही हासिल हो सकती हैं। लेकिन इसके लिए हमें एक बहुत जोरदार आन्दोलन गठित करना होगा जो हमारी मांगों को मानने के लिए सरकार को मजबूर कर दे। यही वजह है कि इस बार लगातार 2 दिन की हड़ताल की योजना बनाई गई है ताकि आर्थिक जीवन का पूरा चक्का जाम कर देने के लिए तमाम औद्योगिक इकाइयां, फैक्टरियां, मिल, कल-कारखाने लगातार 2 दिन बंद हो जाएं। अगर हमारी मांगें मानने के लिए सरकार को मजबूर कर देने में 2 दिन की इस हड़ताल से काम नहीं चला तो हमें संघर्ष के और भी उच्चतर रूपों में जाना पड़ेगा।

साथियो, विश्व पूंजीवाद गहरे संकट में है। आपने हाल ही में देखा कि कैसे पहले ग्रीस में, फिर स्पेन, फ्रांस, पुर्तगाल और यूरोप, मध्य-पूर्व के देशों में और आखिरकार पूँजीवाद के गढ़ अमेरिका में एक जोरदार मजदूर आन्दोलन भड़क उठा था। अगर हम इन आन्दोलनों का कारण खोजें तो हम पायेंगे कि हर देश के आन्दोलन के तात्कालिक कारण बेशक एक से दूसरे देश में अलग-अलग हैं लेकिन अगर हम गहराई से विश्लेषण करें तो हम पायेंगे कि हर जगह मूल कारण एक ही है औ वह है घोर पूंजीवादी शोषण और इसका कुशासन। हमारे देश में भी मजदूर आन्दोलन बढ़ रहा है। मुझे यकीन है और भरोसा भी कि देश भर में जिस संघर्ष को हम 11ट्रेड यूनियनें गठित करने की कोशिश कर रही हैं, उसे संगठित करने में आप अपने को झोंक देंगे। हमारे संगठन ऑल इण्डिया यूनाइटिड ट्रेड यूनियन सेण्टर की ओर से आप सब को क्रान्तिकारी अभिनन्दन देते हुए मैं अपनी बात यहीं समाप्त करता हूं। इन्कलाब जिन्दाबाद!

डीजल के दामों में ...

(पृष्ठ 1 का शेष)

विरोध तक ही सीमित रख रहे हैं। इसलिए हम देशवासियों का आह्वान करते है कि इन क्रूर हमलों को नतमस्तक हो कर हरगिज मंजूर न करें और सही नेतृत्व के तहत वांछित संयुक्त दीर्घस्थाई आन्दोलन विकसित करने के लिए आगे आयें और सरकार को जन शक्ति के आगे झुकने व ऐसे तमाम जालिमाना कदमों को वापस लेने के लिए मजबूर कर दें।

उन्होंने 16 सितम्बर को जारी अन्य एक बयान में कहा : देशी-विदेशी एकाधिकारी पूँजीपतियों के स्वार्थ में कांग्रेस-नीत केन्द्र की यूपीए सरकार द्वारा हाल ही में कई जनविरोधी फैसले लिए गये हैं जैसे पैट्रो-उत्पादों की कीमतों में वृद्धि, सीधे विदेशी निवेश के लिए खुदरा व्यापार को खोल देना, विनिवेश रूट के जरिए लाभकारी सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में एकाधिकारी पूँजीपतियों द्वारा हिस्सेदारी बढ़ाए जाने की इजाजत देना, शिक्षा-स्वास्थ्य सेवाओं का व्यापारीकरण करना और 8वीं तक पास-फेल प्रणाली समाप्त कर देना, गरीब लोगों पर घातक प्रहार हैं।

हम इन तमाम जनविरोधी फैसलों को तुरन्त वापस लिये जाने की माँग करते हैं और हम पीड़ित देशवासियों का आह्वान करते हैं कि वे 20 सितम्बर के भारत बंद को पूर्णत: सफल बनाएं।

आंगनवाड़ी कर्मियों का सम्मेलन सम्पन्न

सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए शशिबाला

चन्दौसी (उ.प्र.) : ऑल इण्डिया यूटीयूसी से सम्बद्ध आंगनवाड़ी कार्यकर्त्री व सहायिका वेलफेयर एसोसिएशन का मुरादाबाद जनपद की बिलारी बाल विकास परियोजना व नवसृजित सम्भल जनपद की बनियाखेड़ा बाल विकास परियोजना का संयुक्त प्रथम सम्मेलन यहाँ 26 अगस्त को संजीवनी पैलेस में सम्पन्न हुआ। इसमें दोनों परियोजनाओं में कार्यरत सैकड़ों आंगनवाड़ी कर्मियों ने उत्साह से भाग लिया। एसोसिएशन के संघर्ष को दर्शाने वाली एक फोटो प्रदर्शनी भी सम्मेलनस्थल पर लगाई गई।

मुख्य वक्ता एसोसिएशन की प्रदेश महासचिव शशिबाला ने बताया कि 35 वर्ष से भी अधिक समय से चल रही जनहित की बेहद महत्वपूर्ण आईसीडीएस में कार्यरत महिला श्रमिकों की हालत बेहद खराब है। सरकार की जनविरोधी व श्रमिक-विरोधी नीतियों के कारण न तो उनकी सेवा स्थाई की जा रही है और न ही कोई स्पष्ट सेवा शर्तें हैं। इसलिए वे भारी शोषण व उत्पीड़न की शिकार हैं। लाभार्थियो को दिया जाने वाला पोषाहार भी बेहद घटिया क्वालिटी का है। एसोसिएशन के संघर्ष के कारण जहाँ आंगनवाड़ी कर्मियों के मानदेय में मामूली वृद्धि हुई है, आंगनवाड़ी सेण्टरों का निर्माण और उनमें नई भर्तियाँ प्रारम्भ हो रही हैं लेकिन आंगनवाड़ी कर्मियों को सरकारी कर्मचारी घोषित कर सभी सुविधाएं देने व लाभार्थियों को महंगाई के अनुसार व पोषण के मानकों के मुताबिक पोषाहार देने की मूल मांगों पर राज्य व केन्द्र सरकारें खामोश हैं। उन्होंने सरकार के इस उदासीन रवैये को बदलने के लिए मजबूर करने के लिए संघर्ष को और तेज करने और इसके लिए संगठन को मजबूत करने का आह्वान किया। सम्मेलन को संतोष गुर्जर, कमलेश चाहल, भूरी देवी, अचला शर्मा, सत्यबाला चौधरी, माया चौहान आदि ने भी सम्बोधित किया।

सत्य की खोज के लिए कॉमरेड शिवदास घोष ने मार्क्सवाद को ही क्यों अपनाया

5 अगस्त की सभा में कॉमरेड प्रभाष घोष

(सर्वहारा के महान नेता, एसयूसीआई(कम्युनिस्ट) के संस्थापक महासचिव कॉमरेड शिवदास घोष के 36वें स्मृति दिवस पर तग 5 अगस्त को, पश्चिमबंग राज्य कमेटी के आह्वान पर कोलकाता के रानी रासमणि एवेन्यू पर आयोजित विशाल जनसभा में पार्टी के महासचिव कॉमरेड प्रभाष घोष के भाषण का पहला भाग यहाँ दिया जा रहा है। यह भाषण प्रोलिटेरियन एरा के 15 सितम्बर के अंक में छपा था। अनुवाद में अगर कोई त्रुटि रह गई हो तो उसके लिए सर्वहारा दृष्टिकोण का सम्पादकमण्डल पूर्णत: जिम्मेदार है।)

आज हम सभी यहाँ महान मार्क्सवादी चिन्तनकार, सर्वहारा मुक्ति आन्दोलन के पथ प्रदर्शक शिवदास घोष के प्रति अपनी गहरी श्रद्धा प्रकट करने के लिए इकट्ठा हुए हैं। आज भारत के 21 राज्यों में उनकी शिक्षा से प्रेरित समर्थक हमदर्द इस तरह की सभाओं-आयोजनों के माध्यम से उन्हें याद कर रहे हैं। हमारे देश के संवाद माध्यमों में कॉमरेड शिवदास घोष का नाम-विचार भले ही न आये, पर इस देश के लाखों लोगों ने गहरी श्रद्धा और भावावेग के साथ उनके नाम और उनकी शिक्षाओं को अपने हृदय में स्थान दिया है। हमारे देश के बाहर भी उनका चिन्तन निरन्तर फैलता जा रहा है। उन्होंने इस युग के श्रेष्ठ क्रान्तिकारी मतवाद मार्क्सवाद-लेनिनवाद को और भी समृद्ध एवं विकसित किया है और इसकी समझदारी को नई बुलन्दी पर पहुंचाया है। उनकी शिक्षा को आधार बना करके पड़ोसी बांग्लादेश में एक ताकतवर सर्वहारा क्रान्तिकारी आन्दोलन जोर पकड़ रहा है। नेपाल के क्रान्तिकारी उनकी शिक्षा को लेकर चर्चा कर रहे हैं। पाकिस्तान के कम्युनिस्ट उनकी कृत्तियों का उर्दू भाषा में अनुवाद कर रहे हैं। यूरोप, अमेरिका, अफ्रीका, पश्चिमी एशिया और लेटिन अमेरिका इत्यादि के विभिन्न देशों में जहाँ कहीं भी क्रान्तिकारी सिर उठा रहे हैं वे हमारे साथ सम्पर्क स्थापित कर रहे हैं। जिससे कि वे कॉमरेड शिवदास घोष की शिक्षा को जान सकें, समझ सकें, अपना सकें। हमारे देश के विभिन्न राज्यों में उनकी शिक्षा से प्रेरित हजारों-हजार छात्र-नौजवान, मजदूर-किसान-महिलाएं व्यक्तिगत जीवन का सब कुछ पीछे छोड़ कर वर्ग संघर्ष और जनआन्दोलन निर्मित कर रहे हैं। जनजीवन की ज्वलन्त समस्याओं को लेकर गत 14 मार्च को तीन करोड़ से अधिक लोगों के हस्ताक्षरित मांगपत्र पर दिल्ली में एक लाख से अधिक लोगों ने सफल विक्षोभ जुलूस निकाला था। वैचारिक और सांगठनिक तौर पर पार्टी की ताकत निरन्तर बढ़ती जा रही है। इस देश के संघर्षशील लोग व्यापक पैमाने पर हमारी पार्टी के प्रति आकर्षित हो रहे हैं।

पार्टी गठन का एतिहासिक संघर्ष

फिर भी, किस प्रकार एक समय कठिन कठोर संघर्ष के माध्यम से प्रबल प्रतिकूल परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए कॉमरेड शिवदास घोष ने इस पार्टी का निर्माण किया उसको आज मैं शुरूआत में ही याद करा देना चाहता हूँ। वह उनकी जुबानी ही सुनिए। कॉमरेड शिवदास घोष ने 1969 में कार्यकर्ताओं की एक सभा में भाषण के दौरान कहा था, ''पहले पहल जब यह पार्टी शुरू हुई हमारे पास क्या था! कुछ नहीं, धनबल नहीं था, जनबल नहीं था। कइयों ने हमारे तर्क सुनकर कहा था, आपका सिद्धांत तो ठीक है, आपका तर्क भी सही है लेकिन पार्टी बनाना क्या इतना आसान है? कोई नेता नहीं, प्रेस पब्लिसिटी नहीं। अत: यह असंभव कार्य है। यह काम कदापि नहीं हो सकता। मैंने उनसे ज्यादा बहस नहीं की। मैंने उनसे पलट कर एक सवाल किया था, तर्क की खातिर मान लो कि होगा नहीं। लेकिन क्या करूँ बताइए? निहित स्वार्थों का गुलाम बन जाऊँ? उनकी दलाली करूँ? विवेक को बेच दूँ? जिसे सत्य समझा है उस तरह का न करके दूसरी तरह का आचरण करूँ? ऐसा मैं नहीं कर सकूँगा। इफ आई डाई स्टॉर्विंग इन द स्ट्रीट, आई शैल डाई विद ऑनर रेज़िंग माई हैड हाई। मैं यदि भूखा रह कर सड़क पर मरता हूँ तो भी सिर ऊँचा रखते हुए इज्जत से मरूँगा। लेकिन मैं अपने को बेच नहीं सकूँगा। मुझे गोली से मारा जा सकता है, मैं जानता हूँ कि शायद मुझे भूखा मरना होगा, हो सकता है जिन्दा हूँ या नहीं यह खबर भी कोई लेने नहीं आए, लेकिन क्या करूँ और विकल्प ही क्या है? इस प्रयास में हो सकता है अंतत: असफल हो जाऊँ तो सोचूँगा मैं कर नहीं सका, यह मेरी अक्षमता थी। अक्षमता की लज्जा एक तरह की होती है। लेकिन विवेक को बेच देना अपराध होता है। मैं इसे अपनी असफलता मानूँगा, लेकिन जानूँगा कि सिर नहीं झुकाया। भूखा मर गया लेकिन क्या कुछ भी नहीं किया? सभी क्रान्तिकारी जानते हैं, वे भूखा मर कर भी यह पैगाम दे गए हैं कि इस व्यवस्था के द्वारा कुछ नहीं होगा। इस शोषणमूलक व्यवस्था को क्रान्ति के जरिए उखाड़ फेंकना होगा। क्रान्तिकारी की यह अपील न तो कभी अनसुनी रहती है और न ही बेकार जाती है। धीरे-धीरे एक-एक, दो-दो करके लोग जुटते रहते हैं आह्वान का प्रत्युत्तर देते हैं।''1 1969 में और एक चर्चा के दौरान उन्होंने कहा था, ''शुरू में जब हमने पार्टी निर्माण का काम शुरू किया, जब समर्थन करने वाले ज्यादा लोग नहीं थे, यहाँ तक कि सिर छिपाने लायक कमरे का भी बन्दोबस्त नहीं कर सके थे, जब अनाहार रह कर दिन पर दिन एक बिल्कुल प्रतिकूल परिस्थिति और जबरदस्त बाधाओं के बीच हमें एक नई पार्टी निर्मित करने के लिए कठिन संघर्ष करना पड़ा था लेकिन इसे लेकर उस समय हमारे मन में कोई शिकायत नहीं थी। हम कितने साल केवल चटाई पर सोए हैं, कितनी सर्दी-गर्मियाँ हमने इसी तरह काटी हैं। हमारे पुराने दोस्तों को आज भी याद होगा। वे इस बात की हामी भरेंगे कि उन्हें हममें धैर्य की जरा भी कमी कभी देखने को नहीं मिली। हमने कितने दिन खाया नहीं, इसे लेकर हम किसी के पास कहने में शर्म महसूस करते थे। क्योंकि मन में सोचते थे खाने की व्यवस्था नहीं कर सके समर्थक नहीं हैं, पाँच पैसे चंदा उठा नहीं सके, लोगों ने दिया नहीं। यह हमारी विफलता है, इसमें इतना गर्व करने की क्या बात है? यह 'त्याग' की पराकाष्ठा कैसे हो सकती है?''2 1975 में युवा सम्मेलन में उन्होंने कहा था, ''जिस समय महज चन्द एक सहकर्मियों को लेकर मैंने इस पार्टी का गठन शुरू किया था उस समय सभी हम पर हंसे थे। सीपीआई उस समय एक अविभाजित पार्टी थी, उसने हमें देख कर व्यंग किया, कहा था चिंटी के पर निकल आये हैं, कहा था कि चमगादड़ भी क्या एक पक्षी है और एसयूसीआई भी क्या एक पार्टी है-क्या इनके साथ भी बैठना होगा? फार्वर्ड ब्लाक, आरएसपी, आरसीपीआई सभी ने कहा था कि एसयूसीआई पार्टी कोई पार्टी नहीं बल्कि एक क्लब है। इसके साथ तो बैठा ही नहीं जा सकता है। यह सब मैंने चुपचाप सहन किया है। उनके किसी व्यंग से आहत नहीं हुआ, सिर्फ पार्टी निर्माण करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हो कर आगे बढ़ा हूँ।''3 इन चन्द एक लाइनों के जरिए व्यक्त हुई है इस देश में एक सही क्रान्तिकारी पार्टी गठित करने का एक लम्बे, जटिल, दृढ़प्रतिज्ञ, जी-जान से किए गये संग्राम के इतिहास की एक झलक।

कॉमरेड शिवदास घोष मार्क्सवाद की ओर बढ़े

1948 में पार्टी की स्थापना हुई। मैं 1950 में अपने स्कूली जीवन के दौरान पार्टी से जुड़ा था। वह ऐतिहासिक संघर्ष का दौर मैंने भी कुछ देखा था। आज की इस सभा में यह मंच, मेज, कुर्सी, माइक आदि का कितना सारा इन्तजाम हुआ है। आज इस खराब मौसम के बावजूद, हजारों हजार लोग कितनी बड़ी संख्या में यहाँ जुटे हैं! लेकिन उन दिनों दक्षिणी कलकत्ता के हाजरा पार्क में कॉमरेड शिवदास घोष सभा को सम्बोधित कर रहे थे। एक माईक जुटाना, एक मेज-कुर्सी जुटाना भी हमारे लिए बहुत कठिन था। कुछ सौ लोगो की जनसभा होने से ही हम खुश हो जाते थे। इन सब अड़चनों को पार करते हुए किसी भी समाचार पत्र के प्रचार के बिना, किसी बड़े पूंजीपति घराने की आर्थिक सहायता के बिना ही हम धीरे-धीरे आगे बढ़े हैं। उस समय भी सड़क पर हम इसी तरह चन्दा संग्रह करते थे जिस तरह आज करते हैं। महान मार्क्सवाद-लेनिनवाद-कॉमरेड शिवदास घोष चिन्तनधारा से मार्गदर्शित हो कर इस तरह से पार्टी आगे बढ़ रही है । आपमें से कोई-कोई जानता है हो सकता है नए लोग न जानते हों, कॉमरेड शिवदास घोष के राजनीतिक जीवन की शुरूआत भारत के स्वाधीनता आन्दोलन के एक महत्वपूर्ण पड़ाव पर हुई थी। उस समय स्वाधीनता आन्दोलन के तीव्र ज्वार ने पूरे देश को आन्दोलित किया था। उस समय मात्र 13 वर्ष की आयु में वे स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़े थे। उस समय अविभाजित बंगाल स्वाधीनता आन्दोलन की क्रान्तिकारिता का केन्द्र स्थल था। वे आजादी आन्दोलन की उस क्रान्तिकारी धारा के साथ जुड़े थे। किशोर अवस्था में ही एक तरफ विद्यासागर, विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ, शरत्चन्द्र, नज़रूल, चित्तरंजन दास, सुभाष चन्द्र और साथ ही खुदीराम, सूर्यसेन, चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह सहित और भी कइयों के जीवन सघर्ष और शिक्षा ने उनको जबरदस्त प्रेरित किया था। बाद में उन्होंने अपने पैने विश्लेषणों में दिखाया था कि इस देश के नवजागरण आन्दोलन में दो धाराएं थी, एक समझौतावादी और एक गैरसमझौतावादी संघर्ष की धारा। विद्यासागर, शरतचन्द्र, शुरूआत के नज़रूल नवजागरण की इस गैर समझौतावादी धारा के प्रतिनिधि थे। जबकि दूसरी तरफ बंकिमचन्द्र, विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ सहित और भी अनेक धार्मिक समझौतावादी धारा के साथ जुड़े हुए थे। राजनीति में गाँधीजी समझौतावादी सुधारवादी धारा के प्रतिनिधि थे। जबकि खुदीराम बोस, भगत सिंह, सूर्यसेन जैसे इस देश के क्रान्तिकारी एवं सुभाषचन्द्र बोस समझौताहीन संघर्ष की धारा के प्रतिनिधि थे। इस समझौताहीन धारा के साथ कॉमरेड घोष जुड़े थे और संघर्ष किया था। इस लड़ाई का उद्देश्य जिस समय कइयों के लिए यही था कि अंग्रेज जाएं, विदेशी हुकूमत से देश आजाद हो, उसी समय कॉमरेड शिवदास घोष के मन में यह सवाल आया कि ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के चले जाने से ही क्या इस देश के मजदूर-किसान शोषित जनसाधारण को मुक्ति मिल सकेगी? यह वांछित मुक्ति किस प्रकार हासिल हो सकती है? इस प्रश्न का सही उत्तर खोजने पर उस समय वे इस युग के सर्वश्रेष्ठ क्रान्तिकारी वैज्ञानिक दर्शन मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सम्पर्क में आये। 1917 में रूस में सफल मजदूर क्रान्ति हो जाने के बाद महान लेनिन और स्टालिन के नेतृत्व में सोवियत संघ में समाजवाद मजबूत कदमों से आगे बढ़ रहा था, जिसकी खबर हमारे देश में भी आ पहुँची थी। 1930 में रवीन्द्रनाथ ने रूस में जाकर मुग्ध होकर सोवियत समाजवाद की प्रगति की भूरी-भूरी प्रशंसा की थी। नेताजी सुभाषचन्द्र ने भी प्रशंसा करते हुए कहा था, मानव सभ्यता में अठारहवीं शताब्दी में फ्रांस का श्रेष्ठ योगदान था फ्रांसीसी क्रान्ति, उन्नीसवीं शताब्दी में जर्मनी का योगदान था मार्क्सवादी दर्शन और बीसवीं शताब्दी में रूस ने सर्वहारा क्रान्ति करके, सर्वहारा सरकार कायम करके और सर्वहारा संस्कृति हासिल करके मानव सभ्यता व संस्कृति को समृद्ध किया था। जाने-माने साहित्यकार शरत्चन्द्र भी क्रान्ति और समाजवाद के पक्षधर थे। इन सबने देश के उस समय के क्रान्तिकारियों के एक हिस्से पर व्यापक प्रभाव डाला था। कॉमरेड शिवदास घोष भी इससे बड़े प्रभावित हुए थे।

धर्म नहीं दिखा सकता मुक्ति का रास्ता

एक प्रश्न उठ सकता है कि हमारे देश में अध्यात्मवादी दर्शनों सहित दूसरे बहुत सारे दार्शनिक मतवाद होते हुए भी, कॉमरेड शिवदास घोष मार्क्सवाद की ओर क्यों झुके? उन्होंने मार्गदर्शक के तौर पर मार्क्सवाद को ही क्यों अपनाया? इस विषय पर आज मैं थोड़े विस्तार से चर्चा करना चाहता हूँ। यह इसलिए चाहता हूँ कि मार्क्सवाद के खिलाफ देश-विदेश में घोर दुष्प्रचार अभियान चल रहा है। विशेषकर सोवियत संघ और चीन में समाजवाद के ध्वस्त हो जाने, अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन को धक्का पहुँचने और हमारे देश में तथाकथित कम्युनिस्ट पार्टी सीपीआई, सीपीएम का पतन, सड़न-यह सब देख कर पुन: नए सिर से यह प्रश्न झकझोर रहा है। 1930,40,50 में ये सब प्रश्न इस प्रकार नहीं उठे थे।

(शेष पृष्ठ 3 पर)

कॉमरेड प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 3 का शेष)

उस समय चिन्तनशील लोगों और आम आदमी के अन्दर मार्क्सवाद, समाजवाद के बारे में गहरा आवेग और प्रशंसा का भाव बढ़ रहा था। आजकल जोरशोर से प्रचार किया जा रहा है कि केवल आध्यात्मिक रास्ते से ही जीवन की सब समस्याओं का समाधान हो सकता है। हमारे देश में इस समय धर्म की चर्चा, पूजा-अर्चना, नमाज, आध्यात्मिक चर्चा को जबरदस्त बढ़ावा दिया जा रहा है। पहले स्वदेशी आन्दोलन के समय और उसके बाद के समय में भी कुछ समय तक यह इतना व्यापक नहीं था। जनआन्दोलन की ताकत जब थी, कम्युनिज़्म के आदर्श का जब प्रभाव था उस समय इन सबका इतना बोलबाला नहीं था। एक तरफ पूँजीवादी राजसत्ता और शासक-शोषक पूँजीपति वर्ग इन सब को जानबूझ कर प्रोत्साहित करता है। दूसरी तरफ हताशाग्रस्त आदमी जो जीवन में कोई भी आशा-भरोसा नहीं देख रहे हैं, वे अब आध्यात्मिक चर्चा और ईश्वरीय शक्ति की ओर अधिकाधिक झुकते जा रहे हैं। इसीलिए दर्शन के विषय में कुछ चर्चा करने की जरूरत है। मैं आज की इस सभा में चर्चा को मूलत: इसी विषय तक सीमित रखना चाहता हूँ। समसामयिक राजनीतिक परिस्थिति को लेकर गत 24 अप्रैल को जो बोलना था बोल दिया। आज उस चर्चा में और जाना नहीं चाहता हूँ।

मैं चर्चा करना चाहता हूँ कि भारत में विवेकानन्द का चिन्तन, गाँधीजी का चिन्तन, रवीन्द्रनाथ का चिन्तन मौजूद रहने के बावजूद, अध्यात्मवाद की चर्चा रहने के बावजूद, मानवतावाद-राष्ट्रीयतावाद की चर्चा रहने के बावजूद कॉमरेड शिवदास घोष ने सत्यानुसंधान के दर्शन के रूप में मार्क्सवाद और सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद को ही क्यों ग्रहण किया? दर्शनगत प्रश्नों पर जाने से पहले एक बात मैं कहना चाहता हूँ। जो ईश्वर में विश्वास करते हैं उनका मानना है कि धरती से लेकर यह समसत प्रकृति, वस्तुजगत जीव-जन्तु, पशु और मनुष्य सब ईश्वर की सृष्टि हैं। सब भगवान का रचा हुआ विधान है और जो कुछ हो रहा है उसी की मर्जी और आदेश से हो रहा है। अमीर-गरीब की सृष्टि भी उसी ने की है। शोषक-शोषित उसने की बनाए हैं। गरीब गरीब क्यों हैं? वे दुख-तकलीफ क्यों झेल रहे हैं? यह सब उनके पूर्वजन्म के पापों का फल है। इसी तरह अमीर इतनी ध न-सम्पदा के मालिक क्यों हैं? यह उनके पूर्वजन्म के पुण्यों का फल है। गरीब लोग इस जन्म में दुख-तकलीफें खुशी-खुशी मान लें तो दूसरे जन्म में उनको मोक्ष प्राप्त होगा। धर्म की इन बातों को यदि हम मान लें तो इस निष्कर्ष पर आना होगा कि छंटनी, बेरोजगारी, महंगाई, गरीबी, भुखमरी, इलाज के बिना हुई मृत्यु आदि जो कुछ हो रहा है वह भगवान की ही देन है, उसकी इच्छा ही अन्तिम बात है और इसके खिलाफ कोई कुछ नहीं कर सकता है। जब से ईश्वर की धारणा समाज में आई है तब से यही चिन्तनधारा हजारों वर्षों से समाज में व्याप्त है। इस चिन्तन को मान लेने से आज के दिन जो शोषण अत्याचार, अन्याय चल रहा है उसे भगवान की ही कार्रवाई मान लेना होगा। उनके खिलाफ प्रतिवाद करना तो दूर रहा, सवाल तक नहीं उठा सकते हैं।

इस संदर्भ में एक बात कहना चाहता हूँ जो ईश्वर विश्वासी, भाववादी, अध्यात्मवादी हैं, वे दावा करते हैं ईश्वर चिन्तन, आध्यात्मिक चिन्तन शुरू से ही मानव समाज में था और चिरकाल तक रहेगा। लेकिन विज्ञान और इतिहास की कसौटी पर विचार करने से यह विश्वास गलत और अनैतिहासिक साबित हो जाएगा। इतिहास ने दिखाया है कि आदिम समाज में ईश्वर की धारणा नहीं थी। अभी भी यदि आप अन्दमान-निकोबार जाएं, अफ्रीका के गहन जंगलों में जाएं जहाँ वही आदिम मनुष्य आज भी हैं उनमें आप किसी भी सुपर-नेचुरल पावर या अतिप्राकृतिक शक्ति या सत्ता की धारणा नहीं पाएंगे। एक समय आदिम समाज का परिदृश्य ऐसा ही था। आदिम मानव ने किसी अभौतिक या अतिप्राकृतिक सत्ता के बारे में नहीं सोचा और न ही सोचने की कोई गुंजाइश थी। यह मेरी बात नहीं है, जिनको इस देश के तमाम ईश्वरवादी मानते हैं, श्रद्धा के साथ मानते हैं, दार्शनिक मतभेद होने के बावजूद हम भी जिनकी गहरी श्रद्धा करते हैं उन्हीं विवेकानन्द की बात मैं कह रहा हूँ। उन्होंने कहा था, ''शुरू शुरू में मनुष्य ने विश्व ब्रह्मण्ड के सत्यों को बाहरी प्रकृति के अन्दर खोजा था। यह था वस्तुमय जगत से ही जीवन की समस्याओं का समाधान खोजने का प्रयास।''4 कितना बड़ा मनुष्य होने से वे अध्यात्मवादी होने के बावजूद इस तरह वस्तुगत सत्य को स्वीकृति दे सके थे। आज के भारत नाम से परिचित इस भूखण्ड पर अतीत में शक्तिशाली वस्तुवादी दर्शन लोकायत, चार्वाक इत्यादि की चर्चा थी। भारतीय दर्शन की पाठ्य सामग्री में भी यह सब मिल जाएगा। प्राचीन भारत के भौतिकवादी दर्शन का जिक्र मिल सकता है। उन भौतिकवादियों के मतानुसार इस विश्व का सब कुछ क्षिति अप तेज मारूत अर्थात् चार भूत या वस्तुओं पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु से बना है। हिन्दू मुनि कणाद (600 ई.पू.) ने कहा था कि एटम या परमाणु से ही सब कुछ की सृष्टि हुई है। शून्य भी एक संख्या है इसका आविष्कार यहीं पर हुआ था। अर्थात् दुनिया में वस्तुहीन कहीं कुछ नहीं है इस धारणा ने जन्म लिया था। अत: शून्य का भी परिमाणगत मूल्य है। भगवान बुद्ध के नाम से जो जाने जाते हैं वे भगवान को नहीं मानते थे। जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर भी भगवान को नहीं मानते थे। अन्य कई देशों में भी अतीत में ईश्वर को नहीं मानने का चिन्तन प्रचलित था। समाज विकास के एक खास स्तर पर सामाजिक जरूरत से सामाजिक प्रगति के क्रम में ईश्वर का विचार आया था। यहाँ एक और बात में कहना चाहता हूँ। कई लोगों का मानना है कि हम मार्क्सवादियों ने ही पहले पहल निरीश्वरवाद का प्रचार किया है। यह मानना गलत है। बल्कि तथ्य यह है कि मार्क्सवाद आने से पहले बुर्जुआ मानवतावादियों ने ही 17वीं, 18वीं, 19वीं शताब्दी में यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति और संसदीय जनतन्त्र की स्थापना के युग में 'सर्वशक्तिमान' ईश्वर के प्रतिनिधि समझे जाने वाले राजतन्त्र के खिलाफ संघर्ष करते हुए पहले पहल ईश्वर विश्वास पर आघात किया था। बेकन हॉब्स, लॉक, स्पिनोज़ा, दिदरो, कान्ट, फुअरबाख सहित अनेक दार्शनिकों और वैज्ञानिकों ने जनतांत्रिक ध्यान-धारणा को विकसित करने और जनतंत्र स्थापित करने की जरूरत से धर्मशास्त्र और धार्मिकता के सिद्धांतों के विरुद्ध विज्ञान, वैज्ञानिक जाँच और वैज्ञानिक तर्क को बढ़ावा दिया था। वे या तो यांत्रिक भौतिकवाद या संशयवाद या धर्मनिरपेक्ष मसनवतावाद में विश्वास रखते थे। 19वीं शताब्दी के मध्य में भारतीय नवजागरण के आगमन काल में हमारे देश में विद्यासागर भी उस युग में निरीश्वरवादी थे। देश-विदेश के बहुत से वैज्ञानिक निरिश्वरवाद के पैरोकार थे। किन्तु वे सभी इससे अधिक कुछ कह नहीं सके कि ईश्वर विश्वास असत्य है, नुकसानदेह है इसलिए वर्जनीय है। इतिहास में कब क्यों यह चिन्तन आया इस पर भी वे सब कोई प्रकाश नहीं डाल पाये। ईश्वरवाद के आने का वैज्ञानिक और इतिहास सम्मत उत्तर पहले पहल मार्क्सवाद ने ही दिया था। मार्क्सवाद ने ही दिखाया है समाज की जरूरत से ही सामाजिक विकास के एक विशेष स्तर पर धर्म या धार्मिक चिन्तन आया था और आगे चल कर नैतिक मूल्यबोधों की धारणा, नीति-नैतिकता, मानव कल्याण की धारणाएं आई थी। इसी वजह से मार्क्सवादी विभिन्न धर्म प्रवर्तकों को उस युग के महापुरुषों के रूप में अत्यंत श्रद्धा की नजर से ही देखते हैं। हम मार्क्सवादी लोग विज्ञान के आधार पर जानते हैं कि जिस किसी भी चिन्तन के आने से पहले उसकी वस्तुगत परिस्थितियाँ तैयार होती हैं और उनके आधार पर वह विचार जगत विकसित होता है। वस्तु या वस्तुगत परिस्थिति पहले है, विचार या भाव उस वक्त मौजूद परिपूरक वस्तुगत परिस्थिति के आधार पर पैदा होते हैं। आदिम समाज में ईश्वर का विचार या धर्म के पैदा होने के उपादान नहीं थे। क्योंकि आदिम समाज में निजी सम्पत्ति नहीं थी, सम्पत्ति के निजी मालिकाने की कोई धारणा नहीं थी, वर्ग विभाजन नहीं था, शासक-शासित सम्बध नहीं थे। अमीर-गरीब का भेद नहीं था। अर्थात् समाज किसी कर्ता के शासन, कानून जारी करने वाले शासक या मालिक की वजह से नहीं चल रहा था। अत: भगवान की धारणा आने के परिपूरक कोई भी मेटिरियल कण्डीशन या वस्तुगत परिस्थिति नहीं थी। उस समय आदिम मानव ने प्रकृति की विभिन्न शक्तियों को जानने का प्रयास किया था, उनको वश में करने या खुश करने की कोशिश की थी ताकि वे उसे कोई नुकसान न पहुँचाएं। इसी उद्देश्य से उसने अपने उस युग के ज्ञान, समझ, बुद्धि-चेतना के आधार पर विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों को वश में करने की कामना से नाच व बोलते हुए नाचने की मुद्रा में हावभाव भी अभिव्यक्त किये थे और उनको खुश करने के लिए मंत्रोच्चारण भी किये थे। अति-प्राकृतिक सत्ता या भगवान का विचार बहुत बाद में केवल तब आया था जब खेतीबाड़ी की खोज हो चुकी थी, स्थायी सम्पत्ति आ गई थी, उसको केन्द्र करके समाज वर्ग-विभाजित हो गया था। दासप्रभु समाज कायम हो गया था। इस दासप्रभु के निर्देश पर समाज चल रहा था। दासप्रभु का आदेश ही उस समय कानून था। दासप्रभु का बर्बर अत्याचार चल रहा था। दासप्रभु के द्वारा किया जाने वाला दमन-अत्याचार जब बर्दाश्त से बाहर हो गया। अधीन बनाये गये दासों के आँसुओं, हाहाकार और दुख-तकलीफों से द्रवित हो कर उन दिनों के चिन्तनकारों के एक समूह ने सोचा था समाज में जिस प्रकार एक प्रभु है बाकी लोग दास हैं, प्रभु है इसीलिए तो उसके शासन और निर्देशानुसार व्यवस्थित ढंग से समाज चल रहा है; इसी प्रकार दुनिया का भी निश्चित ही कोई लॉर्ड या महाप्रभु होना चाहिए जिसके शासन और संचालन में नियमित रूप से दिन रात, ऋतु परिवर्तन, सूर्योदय-सूर्यास्त, अदलबदल कर पूर्णिमा-अमावसा, नदी में ज्वार-भाटा आदि सब कुछ हो रहा है। अत: वे दासप्रभु के भी प्रभु होने चाहिएं। दासप्रभु और दास दोनों ही भगवान की सृष्टि हैं इसलिए दोनों भगवान के बंदे हैं। समाज में इस तरह आई ईश्वर की धारणा और बाद में धार्मिक विचार, पूजापाठ आदि धार्मिक अनुष्ठान आये। इसी वजह से मार्क्स ने एक ऐतिहासिक वक्तव्य दिया था कि '' धार्मिक व्यथा-वेदना है एक ही साथ वास्तविक व्यथा-वेदना की अभिव्यक्ति और वास्तविक व्यथा-वेदना के खिलाफ एक प्रतिवाद। धर्म दबे-पिसे लोगों की आह, हृदयहीन दुनिया का हृदय और आत्माहीन परिस्थितियों की आत्मा है।''5 यहाँ मार्क्स ने समाज विकास के तत्कालीन संदर्भ में धर्म की सकारात्मक भूमिका को उचित मान्यता दी थी। कॉमरेड शिवदास घोष ने भी कहा था, धर्म-प्रचारक उस युग के श्रेष्ठ मनुष्य, महापुरुष थे जिन्होंने अपनी प्रतिभा की अमिट छाप छोड़ी थी। उन्होंने कहा था कि उस युग में दास प्रथा के खिलाफ इसाई धर्म लड़ा था, इस्लाम ध र्म लड़ा था, हिन्दुओं के धर्म में भी उस युग के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक न्याय-नीति, कल्याण, पाप-पुण्य का बोध आदि तमाम धारणाएं थी। अत: मार्क्सवादियों ने धर्म का कोई अनादर नहीं किया। हम सिर्फ यह कहते हैं कि इतिहास के एक स्तर में समाज की अग्रगति की जरूरत पूरी करने के लिए ही धर्म की धाारणा आई थी और उसको आधार बना कर धार्मिक चिन्तन, धार्मिक विधान आया था। इन्हीं धर्म प्रचारकों ने उस समय कहा था, शासक-शासित, दासप्रभु-दास सभी भगवान की संतान हैं। इस अर्थ में सभी समान माने गये हैं। अत: उन्होंने शासकों से कहा कि शासन करो, लेकिन धर्म मान कर ही करो। वे उस युग के परिप्रेक्ष्य में सत्य की साधना करते हुए जो कुछ समझे थे, उनके मन में जो सब चिन्तन-विचार आये थे, वे सोचते थे कि ये सब भगवान की वाणी हैं, उनका ही फरमान हैं। क्योंकि वे विश्वास करते थे कि यह जगत भगवान की सृष्टि है, अमीर-गरीब भी भगवान के बनाये हुए हैं इसीलिए यह भेदभाव चिरकाल तक रहेगा। लेकिन शासकों को धर्मीय विध ान अनुसार प्रजा पर शासन करना चाहिए। बाद के समय में दासप्रथा को पलट कर आया सामन्ती शासन, धर्म आधारित राजतन्त्र। इस राजतन्त्र ने धर्म को हथियार बनाया और प्रजा में यह विश्वास पैदा किया कि राजा, सम्राट भगवान के भेजे हुए प्रतिनिधि हैं। तमाम सम्पत्ति के मालिक भगवान हैं और उनके प्रतिनिधि बनकर राजा, सम्राट, जमींदार समेत सामन्ती प्रभु उस सम्पत्ति का मालिकाना कर रहे हैं और समाज पर शासन कर रहे हैं। अत: राजा का आदेश ही ईश्वर का आदेश है। राजतन्त्र का समस्त अत्याचार, जमींदारों का, सामंती प्रभुओं का समस्त शोषण, दमन, अत्याचार धर्म के पालन के नाम पर चलता था। इसके खिलाफ प्रतिवाद नहीं किया जा सकता था। क्योंकि ऐसा करना धर्म के खिलाफ बगावत करना माना जाएगा। धर्म की इसी भूमिका को समझाने

(शेष पृष्ठ 5 पर)

कॉमरेड प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 4 का शेष)

के लिए मार्क्स का मत था कि धर्म लोगों के लिए अफीम है। धर्म का वास्ता देकर शासक गरीबों व शोषितों को समझा रहे थे कि तुम गरीब हो, तुम शाषित हो–यह ईश्वर का विधान है अपनी इस नियति को तुम्हें मानना होगा। शोषण–दमन के खिलाफ कोई भी प्रतिवाद करना भगवान के बनाये विधान को अमान्य करना और भी पाप है। अपने पूर्वजन्म के पाप का खामियाजा तुम पहले ही भुगत रहे हो। राजा या सामन्त के खिलाफ अब अगर तुमने सिर उठाने की जुर्रत की तो और भी ज्यादा पाप होगा। तुम्हारा इहलोक तो गया ही, परलोक भी जाएगा। अत: उनकी सलाह थी कि अफीम के नशाग्रस्त की तरह झूमते रहो, सोते रहो, अन्याय–अत्याचार के खिलाफ सिर मत उठाओ। दूसरी तरफ, जिस बुर्जुआ वर्ग ने अतीत में राजतन्त्र के खिलाफ जनतन्त्र स्थापना के युग मे धर्म और धार्मिक पिछड़ेपन कुरीतियों पर आघात किया था, आज वही बुर्जुआ वर्ग अपने ह्रासशील दौर में घोर प्रतिक्रियाशील हो जाने पर क्रान्तिकारी चिन्तन और संघर्ष को ध्वस्त करने के लिए धर्म को अफीम के रूप में इस्तेमाल कर रहा है।

मैंने पहले ही कहा है कि धर्म पर पहले पहल आघात बुर्जुआ वर्ग ने ही किया था। फ्रांसीसी क्रान्ति, यूरोपीय नवजागरण और पुराना पड़ गया सामन्तवाद उखाड़ फेंक कर बुर्जुआ जनतंत्र की स्थापना काल में राजतन्त्र के खिलाफ संघर्ष छेड़ा गया था जो इस विश्वास पर टिका हुआ था कि वह शासन भगवान के आदेश पर आधारित था। इसी प्रकार आधुनिक विज्ञान को आधार बनाकर के नवजागरण इस उद्घोषणा के साथ आया था कि वस्तुजगत ही एकमात्र सत्य है, प्रकृति ही एकमात्र सत्य है, प्रकृति से परे कुछ नही है और इसलिए किसी अतिप्राकृतिक सत्ता का कोई अस्तित्व नहीं है। अत: मानवजीवन के क्षेत्र में ईश्वरीय चिन्तन का कोई भी स्थान नहीं हो सकता है। चिन्तन ईश्वरीय मनन है इस विश्वास को यूरोपीय नवजागरण काल के मनीषियों ने खारिज कर दिया था। उसी चिन्तन को हमारे देश में पहले–पहल विद्यासागर लेकर आए थे। बहुत से नहीं जानते हैं कि विद्यासागर ने ही पहली बार इस देश में तर्क के आधार पर जोरदार ढंग से कहा था वेद–वेदान्त, सांख्य इत्यादि प्राचीन धार्मिक ग्रंथ गलत दर्शन हैं इसलिए जीवन के सत्य को प्रतिबिम्बित नहीं करते। वे अध्यात्मवाद के चंगुल और वेदान्त के प्रभाव से जनमानस को, लोगों की चिन्तन प्रक्रिया को मुक्त करना चाहते थे। वे लोगों में प्रबुद्ध तर्कशील चिन्तन प्रक्रिया व तर्क शक्ति पैदा करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने कहा था कि हमारे देश में चाहिए एक नए तरह की शिक्षा, धार्मिक संरक्षण प्राप्त पुरानी गयी गुजरी शिक्षा की बजाय धर्मनिरपेक्ष वैज्ञानिक शिक्षा। यही था विद्यासागर का आह्वान। यह गौरतलब है कि जहां एक तरफ विवेकानन्द के गुरु रामकृष्ण परमहंस अध्यात्मवाद का उपदेश दे रहे थे, वहीं दूसरी तरफ विद्यासागर अध्यात्मवाद के चंगुल से मानव मन को मुक्त करने और धर्मनिरपेक्ष वैज्ञानिक शिक्षा व्यवस्था लागू करवाने के लिए संघर्ष कर रहे थे। चिन्तन की ये दो धाराएं क्यों थी? इसका उत्तर दिया है मार्क्सवाद ने। उत्तर देकर गए हैं मार्क्सवाद को आधार बना कर कॉमरेड शिवदास घोष। उन्होंने दिखाया था कि किसी भी चिन्तन, या भाव के आने से पहले उसके परिपूरक वस्तुगत परिस्थिति, उसके उपादान तैयार हो जाते हैं जिनके बिना यह चिन्तन आ नहीं सकता है। यह एक पहलू है। लेकिन यही सब कुछ नहीं है। उस वस्तुगत वास्तविकता पर आप किस नजरिए से विचार कर रहे हो यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भले ही आप ईमानदार निष्ठावान और त्याग करने को तैयार हों लेकिन यदि दार्शनिक दृष्टिकोण, विचार पद्धति और तर्क पद्धति त्रुटिपूर्ण हो तो आप चाह कर भी सत्य कदापि खोज नहीं पाओगे। भले ही कोई डाक्टर खूब ईमानदार हो, निष्ठावान हो, रोगी का बहुत ख्याल रखने वाला हो, लेकिन आवश्यक चिकित्सा विज्ञान अच्छे से जानता नहीं हो तो वह रोगी का ठीक से इलाज नहीं कर पाएगा। ज्ञान जगत में भी ऐसा ही है। रामकृष्ण का नजरिया वेद–वेदान्त, अध्यात्मवाद और अति प्राकृतिक शक्ति में विश्वास पर आधारित था इसलिए उन्होंने धार्मिक चर्चा को ही प्रोत्साहित किया था। जबकि इसके विपरीत विद्यासागर ने चाहा था धार्मिक विचारों के प्रभाव से मुक्त मन तैयार करना। क्योंकि उन्होंने पाश्चात्य नवजागरण के धर्मनिरपेक्ष मानवतावादी नजरिये, आधुनिक विज्ञान, युक्तिवादी मनन को ग्रहण किया था। आज हम यदि अध्यात्मवादी नजरिये को लेकर चलें तो भारतीय पूँजीवादी व्यवस्था, शोषणमूलक पूँजीवादी समाज व्यवस्था, समाज में मालिक–मजदूर का जो वर्ग–विभाजन, बेइन्तहा अत्याचार–शोषण–दमन–उत्पीड़न और वंचना जारी है इस सब को ईश्वर का विधान और इसलिए नियति मान कर चलना होगा। ऐसे में, इस सब के खिलाफ प्रतिवाद करने का कोई सवाल ही नहीं उठता है। सिर्फ पूजा–अर्चना के माध्यम से परलोक में मुक्ति के लिए भगवान से प्रार्थना करनी होगी। अत: सत्यानुसंधान के इन दो दृष्टिकोणों और विचारपद्धतिगत नजरिये में बुनियादी तफर्का है। यहीं पर मार्क्सवाद का अन्यान्य चिन्तन प्रणालियों से साफ फर्क है।

भाववादी दर्शनों की सीमाबद्धता

मैं आगे यह कहना चाहता हूँ कि कई ऐसे अध्यात्मवादी चिन्तनकार हैं, ऐसे भाववादी दार्शनिक हैं जो ऐसे अनेक वैज्ञानिक सत्यों को मानने की हद तक जाकर भी कि जगत वस्तुमय है, मानव चिन्तन पर परिवेश का असर पड़ता है, वस्तु जगत के परिवर्तन के रास्ते जीव–जन्तुओं और मनुष्य प्रजाति का क्रमविकास हुआ है–यह सब मानने के बावजूद, जिस प्रश्न पर वे अटक गए वह है मन का मतलब क्या है, चिन्तन और भाव क्या है? वस्तु को पँच ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से देखा जा सकता है। लेकिन भावों और विचारों को उसी प्रक्रिया से देखा नहीं जा सकता। ऐसा है तो भाव और विचर कहाँ से आ रहे हैं? क्या विचार और भाव किसी अतिप्राकृतिक या वस्तु से परे किसी स्रोत से पैदा हो रहे हैं या ये एक वस्तुगत प्रक्रिया से वस्तु से ही पैदा हो रहे हैं? यहीं पर है भाववादी दर्शन और वस्तुवादी दर्शन में बुनियादी फर्क। इस प्रश्न के साथ हमारे देश के लोगों द्वारा जीवन–संघर्ष चलाना जुड़ा हुआ है। गाँधीजी ईमानदार और बड़े आदमी थे। वे कहा करते थे कि मैं जो कुछ कर रहा हूँ उस सब का दिशानिर्देशन करने में ईश्वर से आदेश पाता हूँ। इन्हीं गाँधीजी ने स्वाधीनता आन्दोलन में क्रान्तिकारियों का विरोध किया था, सुभाषचन्द्र का विरोध किया था, कांग्रेस से उनको निकाल बाहर करने का समर्थन भी किया था। उन्होंने भगत सिंह की फाँसी रद्द कराने की कोशिश नहीं की। क्योंकि वे मानते थे कि सशस्त्र क्रान्ति देश में सर्वनाश ला देगी, भारी हानि पहुंचा देगी। ऐसी बात भी कही थी कि ''यहाँ तक कि मुझे चाहे आश्वस्त भी कर दिया जाए कि सशस्त्र संघर्ष के रास्ते स्वाधीनता आएगी तो मैं उसको अस्वीकार कर देता। क्योंकि वह असल आजादी नहीं होगी।''6 गाँधीजी का मानना था कि पूँजीपति मालिक और मजदूर का रिश्ता पिता–पुत्र के समान है। उनके शब्दों में कहें तो ''मिल–एजेण्ट्स और मिल–हैण्ड्स के बीच रिश्ता पिता और संतान का रिश्ता होना चाहिए। यह रिश्ता पिता–पुत्र के बीच जैसा ही होता है वैसा ही प्यार और आदर का रिश्ता होता है।''6 उनका दावा था कि ''आत्मशुद्धि के अनवरत प्रयास करके उन्होंने अंतरात्मा की अभी थोड़ी–बहुत आवाज सही–सही सुनने की थोड़ी–बहुत क्षमता विकसित कर ली है।'' इससे उनका तात्पर्य था भगवान की आवाज और वे जो कुछ बोलते थे वे उनके शब्द नहीं बल्कि ''भगवान की आवाज'' होती थी। गाँधीजी कहते थे, ''भगवान की आवाज मैं सुन सकता हूँ, मेरा यह दावा नया नहीं है।...मैं जब यह आवाज सुनता हूँ, तब मैं स्वप्न नहीं देख रहा होता हूँ। यह आवाज सुनने से पहले मेरे अन्दर एक भयंकर संघर्ष होता है। अचानक यह आवाज मेरे अन्दर आती है। मैं ध्यान से उसे सुनता हूँ। निश्चित होता हूँ कि यही वह आवाज है। उसके बाद संघर्ष थम जाता है। मैं शांत हो जाता हूँ...यह मध्यरात्रि 11–12 बजे के बीच होता है। मैं तरोताजा महसूस करता हूँ और इसके बारे में नोट लिखना शुरू करता हूँ, जो पाठकों ने देखे होंगे। ...संशयवादियों को समझाने लायक और कोई भी साक्ष्य मेरे पास नहीं है। .....लेकिन मैं यह कह सकता हूँ कि यदि पूरी दुनिया सर्वसम्मत होकर इसके खिलाफ राय दे, तब भी मेरे इस विश्वास को हिला नहीं सकता है कि मैं भगवान की आवाज सचमुच में सुनता हूँ।''7 सोच कर देखिए गाँधीजी जैसे मनुष्य भी इस प्रकार चिन्तन कर रहे हैं। इन्हीं गाँधीजी के आह्वान पर हजारों हजार देशवासी उस समय आजादी आन्दोलन में शामिल हुए थे और क्रान्तिकारी आन्दोलन को दरकिनार कर दिया था, उन गाँधीजी की सोच ऐसी थी। गाँधीजी जैसे एक महापुरुष और ईमानदार व्यक्ति के मामले में ऐसा क्यों घटा? क्योंकि वे सोचते थे कि मन को ईश्वर सुचवाता है। मन को महा मन सुचवाता है।

आपको यह जानकर ताज्जुब होगा कि विवेकानन्द के विचार भी इसी तरह के हैं। मैं पहले ही बता चुका हूँ कि उनके प्रति हमारी गहरी श्रद्धा है। कॉमरेड शिवदास घोष ने हमें सिखाया था कि विवेकानन्द, गाँधीजी, रवीन्द्रनाथ व अतीत के अन्य महापुरुषों की इज्जत करनी चाहिए। हमारा मत है कि विद्यासागर के बाद विवेकानन्द ही थे जिन्होंने भारतीय राष्ट्रवाद की प्रारम्भ वेला में भारत के लोगों को जगाने, उनमें इन्सानियत का जज्बा भरने में ऐतिहासिक भूमिका निभाई थी। लेकिन श्रद्धा करने के साथ–साथ मतभेद तो हो ही सकते हैं और उन मतभेदों को होंसले के साथ कहना अश्रद्धा का लक्षण किसी तरह नहीं है। यह खुद विवेकानन्द की ही सीख है। जैसा कि मैं पहले ही जिक्र कर चुका हूँ, विद्यासागर साफ कहते थे कि वेद–वेदांत और सांख्य में कोई सत्य नहीं है। वे भगवान में विश्वास नहीं रखते थे। वे कभी मन्दिर नहीं जाते थे। और कभी पूजा–पाठ नहीं करते थे। रामकृष्ण उनके घर गये और उन्हें उचित सम्मान देने के बाद उन्होंने उन्हें दक्षिणेश्वर आने का निमंत्रण दिया। लेकिन विद्यासागर अनीश्वरवाद में दृढ़ विश्वास के प्रति ईमानदार व निष्ठावान थे। इसलिए औपचारिकता की खातिर भी वे दक्षिणेश्वर नहीं गये जो कि तीर्थस्थान माना जाता था क्योंकि रामकृष्ण का काली मन्दिर वहीं था। बाद में विवेकानन्द ने कहा था कि वे रामकृष्ण और विद्यासागर दोनों का ही बराबर आदर करते हैं। हालांकि वे वेदांतवादी दर्शन के प्रचारक थे जो कि विद्यासागर द्वारा अपनाये गये विचारों के विपरीत था। विद्यासागर के प्रति उनका जो आदर था उससे एक ईंच भी भटके बिना विवेकानन्द यह कर सके थे। अब मैं विवेकानन्द की रचनाओं से कुछ प्रासंगिक अंश उद्धृत करता हूँ। उन्होंने कहा था, ''ज्ञान मानव में अन्तर्निहित है, बाहर से कोई ज्ञान नहीं आता है। यह सब अन्दर ही होता है। हम जो यह कहते हैं कि एक आदमी द्वारा 'जानना' , वह सटीक मनोवैज्ञानिक भाषा में होना चाहिए वह जो है उसका पता लगाता है, उस पर पड़ा पर्दा हटाता है। वही 'सीखता है' जो उसकी आत्मा पर पड़े पर्दे को हटा कर 'पता लगाता है' जो असीम ज्ञान की खान है।''8 इस समझदारी से वे किस निष्कर्ष पर पहुंचे? हम सब जानते हैं कि न्यूटन ने गुरूत्वाकर्षण बल को खोजा था लेकिन विवेकानन्द के अनुसार, ''हम कहते हैं कि न्यूटन ने गुरूत्वाकर्षण की खोज की, क्या यह उनके इन्तजार में एक कोने में कहीं बैठा था, यह उनके मन में ही था। समय आया और उन्होंने इसे ढूंढ़ लिया। जो सब ज्ञान दुनिया ने अभी तक पाया है वह उसके मन से आता है, विश्व ब्रह्मण्ड की अनन्त लाईब्रेरी उसके मन में ही है। बाहरी तो महज एक सुझाव, निमितमात्र है, एक मौका भर है जो तुम्हें अपने मन का अध्ययन करने के लिए अग्रसर करता है। एक सेब के गिरने ने न्युटन को एक सुझाव दिया और उन्होंने अपने मन का अध्ययन किया। उन्होंने चिन्तन के पुराने सभी सूत्रों को अपने मन में पुनर्व्यवस्थित किया और उनके बीच एक नये सूत्र को खोज निकाला जिसे हम गुरूत्वाकर्षण का नियम कहते हैं।''8 विवेकानन्द का यही कथन गाँधीजी द्वारा अपनाये गये उसी भाववादी दर्शन को प्रतिफलित करता है। इस विश्वास के अनुसार मानव आत्मा ईश्वरीय आत्मा का अंग है, ईश्वरीय आत्मा परमात्मा है और परम सत्ता है तथा परम सत्ता परम ब्रह्म है और शाश्वत ज्ञान का निवास स्थान है। इसलिए समूचे जगत का ज्ञान अनन्त काल से वहाँ जमा है। अत: किसी भी खोज को नई खोज नहीं कहा जा सकता। विवेकानन्द के चिन्तन की लाइन के अनुसार गुरूत्वाकर्षण का सिद्धांत दसियों हजार साल पहले भी खोजा जा सकता

(शेष पृष्ठ 6 पर)

कॉमरेड प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 5 का शेष)

था। यह प्लेटो या सुकरात के द्वारा भी खोजा जा सकता था। इसी तरह ईसा मसीह या शंकराचार्य भी सापेक्षता का सिद्धांत खोज सकते थे। केवल जरूरत थी पेड़ से एक सेब गिरने जैसी कोई कार्रवाई होने की जो न्युटन से जा टकराया था। क्या ऐसी एक व्याख्या का अनुमोदन आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण कर पाएगा? क्योंकि विवेकानन्द अद्वैत वेदांत में विश्वास करते थे और उनकी चिन्तन प्रक्रिया उसी के अनुसार मार्गदर्शित थी इसलिए उन जैसे समझदार आदमी भी सत्य की अपनी खोज में इस तरह के अजीबोगरीब चिन्तन में फंस गए थे। भाववाद की यही सीमाबद्धता है। इस भाववादी सोच से कोई भी यह मानने को प्रवृत्त होगा ही कि समाज में जो कुछ होता है वह परम सत्ता द्वारा पूर्व आदेशित होता है, परम ब्रह्मद्वारा पूर्व निर्धारित है। अत: यह सब शाश्वत है, अपरिवर्तनीय है इसलिए इसे बदला नहीं जा सकता है। कुछ भी नया नहीं आ सकता है। फिर वही विवेकानन्द अपने देशवासियों की दुख-तकलीफों से व्यथित होकर कहने लगे, ''जिन्होंने लाखों लाख दबे-कुचले गरीबी के मारे नर-नारियों के खून-पसीने और आँसू बहा कर की गई कमाई के बल पर अपनी शिक्षा पाई है फिर भी विलासिता में आकण्ठ डुबे हुए हैं। इन बहुसंख्यक गरीब लोगों के बारे में सोचने का जिनके पास तनिक भी समय नहीं है मैं उन्हें विश्वासघातक कहूँगा। जब तक भारत के कोटि-कोटि लोग अज्ञानता के अंधकार में डुबे रहेंगे, तब तक जो उनके पैसों से ही निश्चिन्त हैं, जबकि गरीब लोगों की तरफ पलट कर भी नहीं देखते, ऐसे सभी आदमियों को मैं देशद्रोही मानता हूँ।''9 ये दूसरे विवेकानन्द हैं जो गरीबों से प्यार करते हैं, जो मानवतावादी हैं, भूखों मर रहे लोगों, शोषित लोगों के लिए उनकी आँखों में आँसू छलक आते हैं। उनकी ओर से वे मानवीय विवेक से आग्रह कर रहे हैं। वे धन-दौलत वालों और तथाकथित शिक्षित नर-नारियों को लानत दे रहे हैं। वे यहाँ तक कह रहे हैं कि ''भारत के करोड़ों लोग रोटी माँग रहे हैं, सिर्फ रोटी, भूख से कातर आवाज में रोटी है जिसे वे माँग रहे हैं और हम उनकी झोली में डाल रहे हैं पत्थर के टुकड़े, भूख की चिन्ता से ग्रसित लोगों के धर्म के मूल्य का बखान करना या दर्शनशास्त्र के बड़े-बड़े बिन्दुओं व्याख्या करना गाली-गलौज के साथ उनका अपमान करना है।'' 9

लेकिन आपको विवेकानन्द के एक और कथन पर ताज्जुब होगा और हैरानी होगी कि क्या ये दोनों एक ही आदमी की कही हुई बातें हैं। 1897 में लाहौर में दिये अपने भाषण में उन्होंने कहा था :''चाहे तुम्हें मालूम हो या न हो सभी हाथों के माध्यम से तुम काम करते हो, सभी पैरों से तुम चलते हो, तुम महल का आनन्द लेने वाले राजा तुम हो, सड़क पर दयनीय हालत में जी रहा भिखारी भी तुम हो; अज्ञानी के साथ-साथ ज्ञानी में तुम हो, तुम्ही वह आदमी हो जो कमजोर है और तुम्ही ताकतवर में हो; इसे जानो और हमदर्द बनो। इसलिए हमें दूसरों को आहत नहीं करना चाहिए। यही वजह है कि मुझे इसकी परवाह नहीं कि मैं भूखा हूँ क्योंकि उस समय कोटि-कोटि लोग अपने मुँह से खाना खा रहे होंगे और वे सब मेरे ही हैं। इसलिए मुझे इसकी कोई परवाह नहीं कि मेरा क्या होता है क्योंकि पूरा विश्व ब्रह्मण्ड मेरा है। सबके साथ ही मुझे पूरा परमानन्द मिल रहा है। मुझे या ब्रह्माण्ड को कौन मार सकता है? यही है नैतिकता। यहाँ, अद्वैत में ही नैतिकता की व्याख्या की गई है।''4

इसका मतलब है कि एक व्यक्ति जो खाने के निवाले के लिए भीख माँग रहा है वह भी सिंहासन पर है। एक आदमी जो अनपढ़ है वह भी पढ़ा-लिखा है, ऐसे विचार कहाँ से आ रहे हैं? ऐसे विचार इस विश्वास से आ रहे हैं कि दुनिया में केवल ब्रह्मा ही सच है और यह ब्रह्मा हम सब में है। एक मानवतावादी के रूप में विवेकानन्द का एक व्यक्तित्व भूखे लोगों के हाहाकार और व्यथा-वेदना के साथ खड़ा था, उनकी माँग उठा रहा था, अभिजात्यों और धनवानों का विरोध कर रहा था जबकि उन्हीं विवेकानन्द का दूसरा व्यक्तित्व यह मान कर खुद को तसल्ली दे रहा था कि करोड़ों दीन-दुखियों में भी ब्रह्मा है और एक राज सिंहासन पर बैठे हुए व्यक्ति में भी ब्रह्मा है। इसलिए भूख और भुखमरी पर शिकवा-शिकायत करने और विलाप करने की कोई बात नहीं है।

इसी जगह सीमाबद्धता से भाववादी ग्रसित हैं। क्योंकि वे सोचते हैं कि मन को अतिप्राकृतिक शक्ति चलाती है। मन सुपर मन से नियन्त्रित है। आत्मा परमात्मा का अंश है। बहुत दिन तक यही लेकर प्रश्न थे कि मन क्या है, विचार और भाव कैसे आते हैं? प्राचीन काल में वस्तुवादी लोग इससे ज्यादा कुछ नहीं बोल पाए कि वस्तुकणों के मिश्रण से जीवन और मन आया है। लेकिन वे इससे ज्यादा व्याख्या नहीं कर पाये और न ही करना सम्भव था। औद्योगिक क्रान्ति के युग में बुर्जुआ मानवतावादियों और वैज्ञानिकों ने यह तर्क दिया था कि मनुष्य भी यंत्रवत है। मस्तिष्क एवं मन भी मशीन है। उससे भी मूल प्रश्न हल नहीं हुआ। भ्रम-भ्रान्ति रह गई। भाववादी हेगल ने वस्तु को परम भाव की द्वन्द्वात्मक अभिव्यक्ति के रूप में देखा और मान लिया कि भाव आदिभाव था जिसके अन्दर ही अन्तर्निहित द्वन्द्व था और यही वह द्वन्द्व था जो इस वस्तुजगत की सृष्टि की ओर ले गया। इसका मतलब है कि वस्तुजगत एक प्रतिबिंब है और उस मायने में यह शाश्वत भाव की एक अभिव्यक्ति है। सरल रूप में कहें तो यह वस्तुजगत एक दिन उसी शाश्वत भाव में विलीन हो जाएगा। अत: प्रकृति और समाज में जो कुछ घट रहा है, वह पूर्वनिर्धारित है। हेंगल के इस सिद्धान्त का विरोध करते हुए विज्ञान के आधार पर मार्क्स ने दिखाया था कि , ''भाव मानव मन में प्रतिबिम्बित हुए और चिन्तन में रूपान्तरित हुए इस वस्तुजगत के सिवा और कुछ नहीं है।'' उनके ही योग्य शिष्य कॉमरेड शिवदास घोष ने आधुनिक विज्ञान के ताजा आविष्कारों के आधार पर इस धारणा की उन्नत और समृद्ध समझ पेश की थी। उन्होंने कहा था, ''मन पहले(प्रायर) है या वस्तु, अर्थात भाव और वस्तु के बीच कौन पहले आया इसको लेकर दर्शन के क्षेत्र में अतीत में दार्शनिकों में लम्बे अर्से से बहस चल रही थी। लेकिन विज्ञान में यह प्रायरिटि का विषय आज सदा-सदा के लिए हल हो गया है। अर्थात वस्तु मन से पहले है और चेतना से निरपेक्ष रूप से, स्वतंत्र रूप से विद्यमान है, यह बात आज संदेहातीत रूप से स्थापित हो गयी है। अब हम यह जानते हैं कि पंच ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से बाहरी दुनिया और वस्तुगत वास्तविकता मनुष्य के मस्तिष्क के साथ अन्तर्क्रिया में आती है जिसकी चिन्तन करने की विशेष क्षमता है–जिसे पॉवर ऑफ ट्रान्सलेशन ऑफ दी ह्यूमन ब्रेन कहा जाता है–इसी प्रक्रिया से ही चिन्तन और भाव का जन्म होता है।'' 14 इस प्रकार निष्कर्ष के रूप में उन्होंने दिखाया था कि मानव चिन्तन और भाव आने के लिए वस्तुगत परिस्थिति पहले तैयार हुई और फिर इनके आधार पर भावजगत विकसित हुआ। मानव की चिन्तन शक्ति की सापेक्ष स्वतंत्रता की सीमा इसी में निहित है। अत: कोई भी चिन्तन या भाव शाश्वत नहीं है। चिन्तन किसी अतिप्राकृतिक शक्ति से नहीं आता है, बल्कि बाहरी जगत के साथ मानव मस्तिष्क की अन्तर्क्रिया से विकसित होता है। किसी भी विचार के उपादान वस्तुगत जगत में ही निहित होते हैं। फिर उपादान समान रहने पर भी विश्लेषण करने या समझने की पद्धति अलग रहने से एक ही घटना या मामले के बारे में अलग-अलग निष्कर्ष पर पहुंच जा सकते हैं। इसीलिए समसामयिक होने पर भी विज्ञान और तर्क को विचार करने का हथियार बना कर विद्यासागर ने वेदान्त का विरोध किया था, लेकिन रामकृष्ण ने अध्यात्मवादी चिन्तन से वेदान्त का जयगान किया था। इसी तरह कई दार्शनिक-राजनैतिक-सामाजिक सवालों पर गाँधीजी और सुभाषचन्द्र में, रवीन्द्रनाथ और शरतचन्द्र में मतभेद थे। इसीलिए आपसे कह रहा था कि भाववादी यह मान कर चलते हैं कि एक अतिप्राकृत शक्ति है, अतिप्राकृतिक चिन्तन है और ये शाश्वत हैं। उन्होंने साधना करके जिस सत्य को समझा है वह ईश्वरीय वाणी है। अत: उनकी वाणी और उपदेश शाश्वत भी है और सभी युगों के लिए लागू हैं।

लेकिन वस्तुगत वास्तविकता क्या है? कोपर्निकस, गैलिलियो और ब्रूनो को चर्चतंत्र के अत्यंत घातक हमलों का सामना करना पड़ा था और आधुनिक विज्ञान की बढ़ोतरी और विकास को बढ़ावा देने के लिए धार्मिक विचारों से लड़ना पड़ा था। आध्यात्मवादी और धर्मीय विधान को अस्वीकार करके ही पाश्चात्य प्रजातन्त्र या बुर्जुआ जनतन्त्र का अभ्युदय हुआ था। इस बात को भी नकारा नहीं जा सकता है कि आधुनिक समय में सामाजिक-आर्थिक-राजनैतिक क्षेत्र की या जीवन के किसी अन्य क्षेत्र की जितनी समस्याएं हैं, उनमें से किसी का भी समाधान गीता, बाइबल, कुरआन या अन्य किसी धर्मग्रन्थ में नहीं मिलता है। क्योंकि अतीत के धार्मिक रहनुमाओं को वर्तमान युग और इसकी समस्याओं को देखने का कोई अवसर नहीं था। और चिन्तन किस तरह पैदा होता है, विचार किस तरह आते हैं, मन किस प्रकार निर्मित होता है, यह समझने में सक्षम नहीं थे। इसलिए नहीं कि वे कम प्रतिभावान थे बल्कि वे उस युग के संदर्भ में विस्मयकारी प्रतिभा के धनी थे। लेकिन उस युग में उन्हें आधुनिक विज्ञान के विकास से परिचित होने का अवसर नहीं मिला था। लेकिन मार्क्स से लेकर शिवदास घोष तक सभी मार्क्सवादी चिन्तनकारों को वह अवसर मिला था। साथ ही विज्ञान की नई-नई खोजों से अवगत होने का सुअवसर मिलने के बावजूद यथेष्ट प्रतिभा के अधिकारी होने पर भी चिन्तनकारों का एक हिस्सा विज्ञान को सत्यानुसंधान के साधन के रूप में ग्रहण न कर सका। अत: वे आध्यात्मवादी या भाववादी दृष्टिकोण की गिरफ्त में आ गये थे इसलिए सत्य को प्रतिबिम्बित करने में विफल रहे। इन आध्यात्मवादी या भाववादी चिन्तनकारों ने मान लिया था कि समाज अपरिवर्तनीय है इसलिए अमीर-गरीब के बीच, शोषक और शोषित के बीच विभाजन की खाई भी सदा रहेगी। ये सब शाश्वत हैं। इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता है। इसी वजह से उत्पीड़ित लोगों को आध्यात्मिक रास्ते से शोषण से वांछित मुक्ति नहीं मिल सकती है। बल्कि उल्टे, यह अध्यात्मवाद शोषण से मुक्ति के संघर्ष में जबरदस्त बाधा है। इसीलिए कॉमरेड शिवदास घोष ने सत्य की अपनी खोज में अध्यात्मवाद को नहीं अपनाया।

जैसेकि आपने इससे पहले देखा कि विवेकानन्द जैसे आदमी की मानवतावादी अभिलाषाओं को चरितार्थ होने में, उनका आध्यात्मवादी चिन्तन, भाववादी दृष्टिकोण बाधा बनकर खड़ा हो गया। गाँधीजी ने भी जीवन के अन्तिम पड़ाव पर कम से कम एक प्रश्न पर पश्चाताप के आँसू बहाए थे। वे भारत का विभाजन नहीं चाहते थे। नेहरू और पटेल देश के विभाजन का प्रस्ताव लेकर जब उनके पास आए तो गाँधीजी सहमत नहीं हो सके। गाँधीजी ने लिखा था, ''मेरी साधना बेकार हो गई। हिन्दु-मुसलमान भ्रातृघाती दंगों में लिप्त हैं। किसी ने मुझे नहीं समझा। समझता था केवल एक आदमी। आज वह पास में नहीं है। वह है सुभाष'' ''.....आज मैं अकेला हूँ। यहाँ तक कि सरदार बल्लभभाई पटेल और जवाहरलाल भी सोचते हैं कि स्थिति का मेरा विश्लेषण गलत है और देश का विभाजन स्वीकार कर लेने से शान्ति बहाल हो जाएगी। ....वे सोचते हैं कि उम्र बढ़ने के साथ-साथ मेरी अवनति हुई है। मैं स्पष्ट रूप से देख पा रहा हूँ कि कीमत चुका कर हासिल इस स्वाधीनता का भविष्य बहुत अंध कारमय है। मैं प्रार्थना करता हूँ कि यह देखने के लिए भगवान मुझे जिन्दा न रखें।''10

लेकिन देश का विभाजन हुआ क्यों? यह भी गाँधीवाद की अनिवार्य परिणति थी। गाँधीजी एवं उनके अनुयायियों ने धार्मिक पुस्तकें हाथ में लेकर स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया था इसकी परिणति में स्वाधीनता आन्दोलन का नेतृत्व मुख्यतया उच्च वर्ण हिन्दुओं के हाथों में चला गया था जिसके नतीजे के तौर पर भारी संख्या में मुस्लिम समुदाय और निम्न वर्ण के हिन्दू समुदाय आजादी आन्दोलन की मुख्य धारा से बाहर ही रह गए थे। यदि धर्मीय प्रभाव से मुक्त अर्थात धर्मनिरपेक्ष मानवतावादी नेतृत्व अगुआई करता तो ऐसा नहीं होता। इस धर्म आधारित राष्ट्रीयतावाद को आधार बना कर हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के के रूप में देश के विभाजन की माँग उठ खड़ी हुई। गाँधीजी ने विज्ञान, वैज्ञानिक दृष्टिकोण को नकारा था। धर्म को हथियार बना कर सत्यानुसंधान करने की कोशिश के फलस्वरूप जो वे नहीं चाहते थे, वही हो गया। इसीलिए सही दृष्टिकोण का सवाल अति महत्वपूर्ण है। जो दिलो-जान से लोगों का भला चाहते थे, उन्हीं गाँधीजी जैसे लोगों का विश्वास

(शेष पृष्ठ 7 पर)

कॉमरेड प्रभाष घोष का भाषण...

(पृष्ठ 6 का शेष)

था कि ''भगवान ने पूँजीपति मालिकों और मजदूरों, दोनों को ही पैदा किया है। पूँजीपति मालिक के पास बुद्धि की शक्ति है और मजदूरों के पास है हाथ-पैरों की श्रमशक्ति।'' कह रहे हैं, '' पूँजीपतियों को हम खुद को उन सब का ट्रस्ट्री समझने का निमंत्रण देते हैं जिन पर वे अपनी पूँजी को बरकरार रखने और बढ़ाने के लिए आश्रित हैं।... हर तरह से करोड़ों बेशक कमाओ लेकिन यह समझो कि तुम्हारी धन-दौक्ले तुम्हारी नहीं है बल्कि लोगों की है। तुम्हारी जायज जरूरतों के लिए तुम जितनी चाहो उतनी ले लो और बाकी को समाज के लिए इस्तेमाल करो।'' उन्होंने आगे कहा कि '' एक व्यक्ति की देह में सिर इसलिए उच्च नहीं है कि वह देह में सबसे ऊपर स्थित है और पाँव के तलुए इसलिए नीच नहीं हैं कि वे धरती को छूते हैं। आदमी की देह के सभी अंग जिस तरह समान हैं उसी तरह समाज के सभी सदस्य भी समान हैं। यह समाजवाद है। यहाँ राजकुमार और किसान, अमीर और गरीब, मालिक और मजदूर सभी एक स्तर पर हैं।'' उनके मतानुसार यह बंटवारा चिरकाल से था और चिरकाल तक रहेगा। गाँधीजी मानते थे कि ''एक व्यक्ति निजी मालिकाने के बिना स्वयं की सम्पत्ति नहीं जोड़ सकता है। उसे सिर्फ यह सुनिश्चित करना होगा कि इस धन-सम्पत्ति का गलत इस्तेमाल नहीं हो, बल्कि न्यायसंगत और सही तरीके से इसका इस्तेमाल हो।'' 6 इसका मायना है बिड़ला टाटाओं का निजी मालिकाना एक जरूरत है, सामाजिक सम्पदा के ट्रस्टी के रूप में वे इसमें से उतना ही लें जितना उनकी जरूरत के लिए जायज बनता है, बाकी को समाज को दे दें। यह न्यायसंगत पावना किस प्रकार तय किया जाएगा? किस मालिक ने कब कहा है कि वह नाजायज ढंग से धन हथिया ले रहा है? उनमें से सभी दावा करते हैं कि जितना उनका लेना जायज बनता है वे उतना ही ले रहे हैं। यहाँ तक कि रवीन्द्रनाथ जैसी हस्ती का भी मामला ऐसा ही था। एक तरफ तो अत्याचारित-उत्पीड़ित लोगों के लिए उन्होंने आँसू बहाये थे, जबकि दूसरी तरफ भाववाद के चंगुल से खुद को मुक्त न कर पाने के फलस्वरूप, उनके विश्व दृष्टिकोण ने सामाजिक क्रान्ति में बाधा पैदा की थी। रवीन्द्रनाथ ने लिखा था,''चिरकाल से ही मनुष्य की सभ्यता में एक हिस्सा अख्यात लोग रहते आये हैं। उनकी ही संख्या ज्यादा है, वे भारवाहक पशुवत हैं; उनके लिए इन्सान बनने का समय नहीं है। वे समाज की सम्पदा की तहछट में पलते हैं। सबसे कम खाकर, सबसे कम पहनकर, सबसे कम शिक्षा लेकर बाकी सभी की सेवा करते हैं। सबसे ज्यादा उनका परिश्रम है। फिर भी सबसे ज्यादा उनका ही असम्मान है। कहीं वे बीमारी से मरते हैं, कहीं निराहार मरते हैं, उपर वालों की लात-डण्डे खा कर मरते हैं–जीवन यात्रा के लिए जितनी कुछ सुयोग-सुविधा चाहिए, सब कुछ से ही वे वंचित हैं। वे सभ्यता के प्रकाशस्तम्भ हैं सिर पर दीया रख कर खड़े रहते हैं–ऊपर के सभी प्रकाश पाते हैं उनके शरीर से तेल झरता रहता है।''11 इस वक्तव्य में साफ जाहिर है कि अत्याचारित-उत्पीड़ित लोगों के लिए उनमें कितनी ज्यादा व्यथा-वेदना थी। लेकिन इसके तुरन्त बाद वही रवीन्द्रनाथ लिखते हैं, ''मैं उनके बारे में अक्सर सोचा करता था। लेकिन इसी निष्कर्ष पर पहुँचता कि उनकी मदद करने का कोई उपाय नहीं है।'' (वही) उपाय क्यों नहीं है? क्योंकि उनके अनुसार, ''यदि कोई नीचे न रहे तो कोई ऊपर कैसे रह सकेगा। अर्थात उपर रहने की जरूरत है। ऊपर रहे बिना कोई अपनी नजदीकी ज्ञान-परिधि से परे कुछ देख नहीं सकता है। मात्र पशुवत अस्तित्व के लिए जीना मनुष्य की नियति नहीं हो सकती है, यह मनुष्यत्व नहीं है। जैसे-तैसे जिन्दा रहने की सीमा पार कर जाने में ही उसकी सभ्यता है। सभ्यता का बहुआकाँक्षित फल फुर्सत के खेत में फला-फूला है।'' 11 अत: उनके मतानुसार लोगों के एक हिस्से को निचले स्तर पर रहना ही होगा वरना दूसरा हिस्सा ऊपरले स्तर पर नहीं रह सकता है। ऊपरले स्तर पर कुछ लोग रहे बिना वे ज्ञान-विज्ञान, साहित्य-संस्कृति व ऐसी अन्य सामाजिक गतिविधियाँ नहीं कर सकते, उन्होंने यह सोचा। रवीन्द्रनाथ भी यह मानते थे कि ऊपरले और निचले स्तर का यह फर्क चिरन्तन है और सभ्यता के लिए यह जरूरी है। वे यह भी कह गये कि ''मैं सोचा करता था कि जो महज हालात के चलते नहीं है (अर्थात केवल आर्थिक परिस्थिति के कारण ही नहीं), बल्कि ''तन-मन की गति-प्रकृति के कारण भी समाज के निचले स्तर के परिश्रम वाले काम करने को बाध्य हैं उनकी यथासम्भव शिक्षा, स्वास्थ्य और सुख-सुविधाओं में सुधार लाने के लिए भरसक प्रयास करने चाहिएं।'' 11 इस तरह आप देख सकते हैं कि उनके अनुसार खास तबके के लोगों के तन और मन की फितरत ही कुछ ऐसी है कि वे निचले स्तर के काम करने के माफिक हैं और निचले स्तर पर काम करने को मजबूर हैं। अर्थात इनका शारीरिक और मानसिक ढाँचा इस तरह से निर्मित ही हुआ है कि वे निचले स्तर के समझने जाने वाले काम करने के लिए फिट हैं। इसलिए अमीर-गरीब का विभाजन या मालिक और मजदूर का सम्बन्ध और शारीरिक व मानसिक श्रम के बीच विभाजन सदा से रहता आया है। ऐसा इसलिए हुआ कि उनका दृष्टिकोण भाववादी विचारों से आच्छादित था और इसलिए समाज में इस वर्ग विभाजन के पीछे वैज्ञानिक कारण को ही पकड़ने में वे विफल रहे। आप आसानी से समझ सकते हैं कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखना कितना अपरिहार्य है।

और एक जगह रवीन्द्रनाथ ने कहा था, ''किसी का अपनी सम्पत्ति से लगाव होना तर्क-वितर्क का विषय नहीं है। यह मानव प्रकृति है। हम खुद को अभिव्यक्त करना चाहते हैं। सम्पत्ति व्यक्ति की आत्म-अभिव्यक्ति का ढंग है।... लेकिन मरणशील एक साधारण आदमी के लिए निजी सम्पत्ति उसकी वैयक्तिकता को व्यक्त करने की भाषा है। अगर वह इसे गवां दे तो वह मूक हो जाएगा।... निजी सम्पत्ति रहे लेकिन इसके उपभोग की अतिशय स्वतंत्रता की व्यक्तिवादिता को सीमित कर दिया जाए। उस सीमा के बाहर जो उसका अतिरिक्त हिस्सा रहे उसे सर्वसाधारण की भलाई के लिए छोड़ देना चाहिए। संक्षेप में व्यक्ति खुद के लिए कुछ रखेगा बाकी को दूसरों को दे देगा। खुद को और गैरों को मान्यता देकर ही सही समाधान सम्भव है। जब इनमें से एक को भुला दिया जाता है तब मानव प्रकृति में टकराव आ जाता है।'' 11

व्यक्ति को न्यायोचित कुछ अपने भोग के लिए रखना चाहिए और बाकी दूसरों को दे देना चाहिए यह है मानवतावादी दृष्टिकोण, फुअरबाख का दृष्टिकोण। फुअरबाख के शब्द ये थे, 'अपने लिए तर्कसंगत प्रतिबंध और दूसरों के लिए प्यार ही प्यार।'' उनका उपदेश यह था कि सम्पत्ति हासिल करने के मामले में, खुद के उपभोग के मामले में तर्कसंगत आत्मनियन्त्रण होना चाहिए और बाकी को दूसरों के लिए प्यार और स्नेह से दे देना चाहिए। फुअरबाख के अनुसार 'मेरे और तुम्हारे' बीच प्यार चिरन्तन है, यह इतिहास के हर युग के लिए उपयुक्त है। जिस आदमी की बात उन्होंने सोची थी वह आदमी अमूर्त था, वह किसी वर्ग, किसी दौर से सम्बन्धित नहीं था। इस समझदारी से यह बात आती है कि पूँजीपतियों और मजदूरों के बीच रिश्ता भी प्यार-मुहब्बत का रिश्ता है। इसलिए मजदूरों को जो कुछ पूँजीपतियों से मिलता है वह प्यार-मुहब्बत का इजहार है। यह वर्गोपरि अमूर्त आदमी की अवधारणा है। इस मानवतावाद को शाश्वत मान लिया गया है। गाँधीजी और रवीन्द्रनाथ का भी यही दृष्टिकोण था। इस दृष्टिकोण के अनुसार सम्पत्ति का निजी मालिकाना और सम्पत्ति हासिल करने की एक व्यक्ति की चाह को न्यायसंगत और तर्कसंगत मान लिया गया है। अत: यह दृष्टिकोण पूँजीवादी मालिकाने के हक में ही काम करता है। इसलिए यह दृष्टिकोण भारत में मौजूद पूँजीवादी शोषण व्यवस्था को उखाड़ फेंकने की राह रोशन नहीं कर सकता है। इसी वजह से कॉमरेड शिवदास घोष ने मार्क्सवाद को विज्ञान पर आधारित इस युग के श्रेष्टतम जीवन दर्शन के रूप में ग्रहण किया था। (शेष अगले अंक में)

कॉमरेड शिवदास घोष स्मरण दिवस मनाया

जेपी नगर : 6 अगस्त को एसयूसीआई(सी) जिला जेपी नगर ने गाँव अखबंदपुर में कॉमरेड शिवदास घोष स्मरण दिवस मनाया। इस अवसर पर हुई सभा की अध्यक्षता पार्टी के जिला इंचार्ज कॉ. शील कुमार ने की। मुख्य वक्ता थे पार्टी के उत्तर प्रदेश राज्य कमेटी के कार्यालय सचिव कॉमरेड जे. वर्मा। सभा का संचालन कॉ. गम्भीर सिंह ने किया। सभा के आरम्भ में सभाध्यक्ष, मुख्य वक्ता व अन्य साथियों ने कॉ. शिवदास घोष के चित्र पर पुष्पांजली अर्पित की। कॉ. शील कुमार व सिद्धराज सिंह ने जनवादी गीत गाये। सभा की शुरूआत कॉमरेड शिवदास घोष पर रचित गान से हुई। सभा को कॉमरेडस ऋतु चौधरी व राजेन्द्र सिंह एडवोकेट ने भी सम्बोधित किया। सभा का समापन अन्तर्राष्ट्रीय गान के साथ हुआ।

बदलापुर, जौनपुर (उत्तर प्रदेश) : 12 अगस्त को इस युग के महान मार्क्सवादी दार्शनिक कॉमरेड शिवदास घोष के स्मृति दिवस के अवसर पर सल्तनत बहादुर इन्टर कॉलेज बदलापुर के सभागार में एसयूसीआई(सी) की राज्य स्तरीय सभा हुई। सभा में राज्य के तमाम जिलों से पार्टी के समर्थकों, हमदर्दों व कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। सभा की अध्यक्षता पार्टी के राज्य सचिव कॉ. वी.एन. सिंह ने की। मुख्य वक्ता थे एसयूसीआई(सी) पार्टी के बिहार राज्य कमेटी के वरिष्ठ सदस्य कॉ. अरुण कुमार सिंह। सभा का संचालन पार्टी के प्रदेश कार्यालय सचिव कॉ. जगन्नाथ वर्मा ने किया। सभा की शुरूआत कॉ. शिवदास घोष के चित्र पर माल्यार्पण से हुई। इसके बाद कॉमरेड शिवदास घोष पर रचित गान गाया गया। सभा को कॉमरेड स्वपन चटर्जी व मुख्य वक्ता ने सम्बोधित किया। वक्ताओं ने कॉ. शिवदास घोष के जीवन-संघर्ष पर चर्चा करते हुए वर्तमान आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक परिस्थितियों के बारे में बताया। उन्होंने कहा कि पूँजीवादी व्यवस्था जनजीवन को चौतरफा तबाह कर रही है। ऐसे में कॉमरेड घोष के विचारों की रोशनी में पूँजीवाद-विरोधी समाजवादी क्रान्ति को सफल करना होगा। सभा का समापन अन्तर्राष्ट्रीय गान के साथ हुआ।

दहेज हत्या के आरोपियों को गिरफ्तार करने की मांग पर धरना

एसयूसीआई(सी), अमरोहा जिला सांगठनिक कमेटी के सचिव कॉमरेड शील कुमार ने 9 सितम्बर को जारी बयान में बताया कि नूरपुर गाँव की लड़की रेशमा को जिसकी शादी केवल तीन माह पहले मोहरका पट्टी गाँव में हुई थी, ससुराल वालों ने जलाकर मार डाला। रिपोर्ट दर्ज कराने के 4 दिन बाद भी जब हत्या के आरोपियों को गिरफ्तार नहीं किया गया तो मेहनतकश जन संघर्ष कमेटी और एसयूसीआई(सी) के नेतृत्व में काफी संख्या में महिलाओं सहित लगभग 400 लोगों ने एसपी कार्यालय, अमरोहा पर धरना दिया। धरने को कॉमरेड शील कुमार, राजेन्द्र सिंह एडवोकेट, पार्टी की मुरादाबाद जिला इकाई की कॉ. कमलेश चाहल व हरकिशोर सिंह एडवोकेट ने सम्बोधित किया। मंच संचालन कॉ. गम्भीर सिंह ने किया। बीकेयू के जिला अध्यक्ष महाबीर सिंह ने भी धारने को सर्म्थन दिया। धरने में बशरत खाँ के साथ पीड़ित परिवार वाले भी शामिल हुए। अन्त में आन्दोलन के दबाव में रात 10 बजे मृतका रेशमा के पति व ससुर को गिरफ्तार किया गया।

R.N.I. No.- 43022/85
P.R.No.-DL(C)-01/1123/2012-2014
Posting at IPMBC on 7–8 and 22–23 Fortnightly Date of Printing : 20 September, 2012

सर्वहारा दृष्टिकोण

23 सितम्बर से 7 अक्तूबर, 2012

बढ़ती बेरोजगारी, महंगाई, भ्रष्टाचार, अश्लीलता, नशाखोरी के खिलाफ युवाओं का रोष प्रदर्शन

बढ़ती बेरोजगारी, महंगाई, भ्रष्टाचार, अश्लीलता, नशाखोरी के खिलाफ रोहतक और पटना में ऑल इण्डिया डेमोक्रटिक यूथ ऑर्गेनाइजेशन (एआईडीवाईओ) के बैनर तले रोष प्रदर्शन करते हुए नौजवान

पटना, 3 सितम्बर : 'हर हाथ को काम नहीं तो बेरोजगारी भत्ता दो', 'महंगी रोको, बांधो दाम, नहीं तो होगी नींद हराम', 'भ्रष्टाचार को बढ़ावा देना बंद करो', 'अश्लीलता-नग्नता पर रोक लगाओ', 'बुद्ध के राज्य में शराबखोरी नहीं चलेगी', 'बढ़ते अपराध पर रोक लगाओ', 'शिक्षा-स्वास्थ्य का व्यापारीकरण नहीं चलेगा', 'जानलेवा एस्बेस्टस फैक्ट्री के निर्माण पर रोक लगाओ', 'उपजाऊ जमीन पर उद्योग लगाना नहीं चलेगा', 'रिक्त पदों को तुरन्त भरो' इत्यादि गगनभेदी नारों के साथ बिहार के कोने-कोने से आये हजारों नौजवान मांग तख्तियां, झंडे-बैनरों से सुसज्जित जुलूस की शक्ल में देखते-देखते सड़कों पर उतर पड़े। प्रदर्शनकारियों के तेवर और उनके अनुशासित जुलूस, नारे लगाने के अंदाज को देखकर शहीदे-आजम भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, खुदीरा बोस, बैकुंठ शुक्ल जैसे क्रांतिकारियों की दृढ़ इच्छाशक्ति, क्रांतिकारी चरित्रों के संस्मरण जेहन में बरबस उभरने लगे। हरेक प्रदर्शनकारी नौजवान के चेहरे पर राजनैतिक-सांस्कृतिक अंधेरपन की घेराबंदी को तोड़ देने की कटिबद्धता नजर आ रही थी।

दृढ़ प्रतिज्ञ नौजवानों की टोलियां एसयूसीआई (कम्युनिस्ट) के युवा संगठन ऑल इंडिया डेमोक्रेटिक यूथ ऑर्गेनाइजेशन के आह्वान पर तनी बंद मुट्ठियों के साथ सड़कों पर उतरी थी, जिसका नेतृत्व संगठन की राष्ट्रीय महासचिव कॉ. प्रतिभा नायक, राज्य संयोजक कॉ. ज्योति कुमार, संयोजकमंडल के सदस्य कॉ. इन्द्रदेव राय, कॉ. लाल बाबू महतो, कॉ. अरविन्द कुमार, कॉ. रमन कुमार सिंह, कॉ. कुमुद राम, कॉ. अनिल कुमार चांद सहित विभिन्न जिलों के प्रभारी कर रहे थे।

जुलूस गांधी मैदान से चलकर फ्रेजर रोड, डाक बंगला चौराहा, पटना जंक्शन गोलम्बर, न्यू मार्केट होते हुए आर. ब्लॉक पहुंचा ही था कि पुलिस वालों ने आगे जाने से रोक दिया। इस दौरान पुलिस से नोंक-झोंक भी हुई, क्योंकि प्रदर्शनकारी हर हालत में मुख्यमंत्री तक पहुंचना चाहते थे। पुलिस के रोकने पर प्रदर्शनकारी वहीं कॉ. इन्द्रदेव राय की अध्यक्षता में सभा करने लगे। नौजवानों की सभा को ऑल इंडिया डी. वाई. ओ. की महासचिव कॉ. प्रतिभा नायक ने संबोधित करते हुए कांग्रेस नेतृत्ववाली केन्द्र की सरकार और राज्य सरकार को युवा विरोधी, रोजगार विरोधी सरकार कहा। उन्होंने कहा कि दोनों सरकारें रोजगार के संकुचनवाली नीति-उदारीकरण की नीति को लागू करती जा रही हैं जिसके चलते श्रम प्रधान उद्योगों की जगह पूंजी आधारित उद्योगों को बढ़ावा दिया जा रहा है। परिणामतः रोजगार के अवसर घटते जा रहे हैं। स्थायी प्रकृति के कामों में भी ठेका और मानदेय पर कर्मियों की बहाली करने की प्रथा आरंभ कर दी गयी है। दोनों सरकारें नौजवानों को गैर इंसान बनाने के लिए अश्लीलता-नग्नता को बढ़ावा दे रही हैं, शराबखोरी को बढ़ावा दे रही हैं। नतीजतन आपराधिक घटनाएं तेजी से बढ़ रही हैं। उन्होंने बढ़ती बेरोजगारी, महंगाई, भ्रष्टाचार, रोजगार संकुचन नीति के खिलाफ राष्ट्रव्यापी युवा आंदोलन तेज करने का आह्वान किया। उन्होंने आगे कहा कि उच्च नीति-नैतिकता, मूल्य बोध से लैस क्रांतिकारी युवा संगठन और उसके आंदोलन को राष्ट्रव्यापी बनाने के लिए केवल बिहार में ही नहीं देश के सभी राज्यों में युवाओं के जुझारू आंदोलन हो रहे हैं। अंत में उन्होंने कहा कि तमाम समस्याओं की जड़ वर्तमान बर्बर पूंजीवादी व्यवस्था से निजात पाने के लिए राष्ट्रव्यापी जुझारू युवा आंदोलन को पूंजीवाद-विरोधी समाजवादी क्रांति के परिपूरक बनाना होगा।

सभा को संबोधित करते हुए एसयूसीआई (कम्युनिस्ट) बिहार राज्य कमिटी के वरिष्ठ नेता कॉ. अरुण कुमार सिंह ने कहा कि बिहार सरकार के पक्ष-विपक्ष दोनों के नेता सन् 74 के छात्र-युवा आंदोलन में पटना की सड़कों पर 'रोको महंगी, बांधो दाम, नहीं तो होगी नींद हराम' का नारा एक ही साथ लगाते थे। ये लोग बारी-बारी से सत्ता में बैठते ही आम लोगों का जीना हराम करने लगे। भ्रष्टाचार उनका मुद्दा था-दोनों भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने लगे, राष्ट्रीय सम्पत्ति को निजी मालिकों के हवाले करने लगे, शिक्षा-स्वास्थ्य-बिजली एवं परिवहन का निजीकरण करने लगे। भाजपा-जदयू की सरकार कुछ रोड, पुल, पुलिया बनवाकर जनता को विकास का बाइस्कोप दिखा रही है। उन्होंने सवाल किया कि सरकार ने कितने पदों पर बेरोजगारों को बहाल किया, स्वास्थ्य-शिक्षा-बिजली-परिवहन को जनता के लिए कितना सुलभ बनाया, कितने नये कल-कारखाने खुले, सरकार कितने बड़े उद्योगों को चालू करा पायी, किसानों को कितने सुलभ तरीके से खाद-बीज मुहैया करा पायी। उल्टे इस राज्य में राजनेता-अपराधी-प्रशासन का गठजोड़ मजबूत हुआ है। इसके बल पर ही राज्य में शराब का कारोबार फला-फूला है। अपराध चरम पर पहुंच गया है। कंचनबाला की आत्म हत्या, पटना की स्कूली छात्रा का गैंगरेप, बुजुर्ग महिलाओं तक के साथ बदसलूकियों की घटनाएं रोज-ब-रोज बिहार के हर हिस्से में घटित हो रही है। अंत में उन्होंने कहा कि बिहार के नौजवानों को यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि देश और राज्य आर्थिक नीतियों पर चलते हैं और वे आर्थिक नीतियां मुनाफा के लूट पर आधारित आर्थिक नीतियां हैं। ये जनविरोधी आर्थिक नीतियां ही बेरोजगारी, अपसंस्कृति, महंगाई, भ्रष्टाचार का मूल कारण हैं। इसी मूल कारण को समझते हुए उच्च नीति-नैतिकता से लैस होकर नौजवानों के आंदोलन को पूंजीवाद विरोधी समाजवादी क्रांति की मंजिल तक पहुंचाना है। सभा को मधेपुरा के कॉ. भगवान चन्द्र, भागलपुर के कॉ. भूपेन्द्र सिंह, खगड़िया के कॉ. जितेन्द्र कुमार, मुंगेर के कॉ. रवीन्द्र मंडल, मुजफ्फरपुर के कॉ. नरेश राम, औरंगाबाद के कॉ. संदेश यादव, रोहतास के कॉ. ब्रजकिशोर, वैशाली के कॉ. अवधेश कुमार, अरवल के कॉ. रूपेश कुमार, जहानाबाद के कॉ. डा. मानव तथा पटना के कॉ. अनिल कुमार चांद ने संबोधित किया। इसके पहले राज्य संयोजक कॉ. ज्योति कुमार के नेतृत्व में 5 सदस्यीय प्रतिनिधिमंडल मुख्यमंत्री से मिलकर 12 सूत्री मांग पत्र सौंपा।

1 सितम्बर को घाटशिला (झारखण्ड) में आयोजित ऑल इण्डिया डीएसओ के चौथे राज्य सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कॉमरेड जुबैर रब्बानी

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर ऑफ इण्डिया की ओर से कॉ. गिरिजेश्वर सिंह द्वारा 3ए/38, डब्ल्यू.ई.ए., करोल बाग. नई दिल्ली-5 से संपादित व प्रकाशित तथा परम्परा प्रिंटिंग प्रेस, बी-70/83, इण्डस्ट्रियल एरिया, लॉरेंस रोड, दिल्ली-35 से मुद्रित, दूरभाष: 011-25726631, E-mail: sarvaharadrishtikon@yahoo.com